ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 56 अंक : 1 नवम्बर 2009 मूल्य : 10 रुपये

ग्रामीण ऋण व्यवस्था

ईंधन का नया विकल्प एनर्जी केक

बोनसाई बनाएं लाभ कमाएं

रोग निवारक नींबू

जागो ग्राहक जागो

उपभोक्ता 'क्या आप जानते हैं?'

- सरकार के पास पर्याप्त मात्रा में खाद्य भंडार उपलब्ध है।
- सरकार ने आवश्यक वस्तु अधिनियम के अन्तर्गत चावल, धान, खाद्य तेल, दालों एवं चीनी को जमा करने की एक निश्चित मात्रा तय की है।
- आपको विभिन्न वस्तुओं की जमा की गई मात्रा की जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है।

सजग रहें !!!

यदि आप किसी व्यक्ति को इन वस्तुओं की निर्धारित सीमा से अधिक मात्रा में जमा करते हुए पाएँ, तो कृपया इस की सूचना जिलाधिकारी/जिला कलेक्टर, जिला आपूर्ति अधिकारी अथवा अन्य पदाधिकारियों को दें।

davp 08101/13/0090/0910

जनहित में जारी

उपभोक्ता मामले, खाद्य एवं सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
भारत सरकार
कृषि भवन, नयी दिल्ली-110001, वेबसाईटः www.fcamin.nic.in

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

कुरुक्षेत्र

वर्ष : 56 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48, कार्तिक–अग्रहायण 1931, नवम्बर 2009

प्रधान संपादक
नीता प्रसाद

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110 011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
जे.के. चन्द्रा

व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा

दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

गरीबों का भविष्य संवारती सामुदायिक अल्पबचत समितियां	डॉ. हेमलता आंकोदिया	3
ग्रामीण ऋण व्यवस्था का बदलता स्वरूप	डॉ. सुमन पामेचा एवं एकता झा	8
सूदखोरों के जाल से किसान क्रेडिट कार्ड तक	डॉ. शम्भूनाथ यादव	11
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की प्रासंगिकता	डॉ. नरेन्द्र पाल सिंह एवं डॉ. लोकेन्द्र सिंह	15
लघु ऋण व्यवस्था के जरिए महिला सशक्तिकरण	डॉ. सुनिता बोहरा	20
ग्रामीण विकास राज्यमंत्री से साक्षात्कार	–	26
एनर्जी केकः ईंधन का एक नया विकल्प	पंकज कुमार	29
गांव में बोनसाई बनाएं लाभ कमाएं	आर.एस. सेंगर एवं रेशू चौधरी	32
भरपूर कमाई हेतु मटर की उन्नत खेती	जगपाल सिंह मलिक	37
स्फूर्तिदायक और रोग निवारक नींबू	साधना यादव	42
कपास की खेती में इतिहास रचता एक प्रगतिशील किसान	वीरेन्द्र परिहार	45

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

सम्पादकीय

'ऋण के जरिए ग्रामीण विकास' वर्तमान में विकास का स्वरूप बन चुका है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व बैंक हो या राष्ट्रीय स्तर पर देश की सरकारें, सभी अब ऋण के जरिए विकास के पक्षधर हैं चूंकि पिछड़ी हुई या विकासशील अर्थव्यवस्था ऋण के बिना आगे नहीं बढ़ सकती। यही वजह है कि लघु ऋण कार्यक्रम सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि अधिकतर विकासशील और गरीब देशों में बड़ी तेजी से अपना दायरा बढ़ा रहे हैं।

ग्रामीण भारत में अधिकतर लघु ऋण कार्यक्रम समूहगत ढांचों के जरिए क्रियान्वित किए जाते हैं जिन्हें स्वयंसहायता समूह के नाम से जाना जाता है। एक अनुमान के अनुसार इस समय भारत में 50 लाख से अधिक स्वयंसहायता समूह हैं जिनके जरिए 5 करोड़ लोग लाभान्वित हो रहे हैं और इनमें से लगभग 92 प्रतिशत स्वयंसहायता समूह सिर्फ महिलाओं के हैं। न केवल भारत में बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी लघु ऋण कार्यक्रमों में भाग लेने वाले सदस्यों में 80–85 प्रतिशत महिलाएं हैं। इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं के साथ काम करना कोई घटना मात्र नहीं है, इसके पीछे निश्चित कारण व तर्क हैं। जिसका एक बड़ा कारण है कि कुल अत्यधिक गरीब जनसंख्या में 60–65 प्रतिशत महिलाएं हैं। लेकिन इससे भी बड़ा कारण है महिलाओं का कर्ज वापसी में पुरुषों की तुलना में अधिक अनुशासित व प्रतिबद्ध होना। इस तरह स्वयंसहायता समूह ग्रामीण ऋण के जरिए गरीबी उन्मूलन के साथ महिला सशक्तिकरण का भी कार्य कर रहे हैं। आज जरूरत इस बात की है कि इन स्वयंसहायता समूहों को पर्याप्त प्रशिक्षण दिया जाए जिससे ये अपनी गतिविधियां व्यवस्थित तरीके से चला सकें और लघुऋण व्यवस्था सही मायने में उनका स्तर ऊपर उठाने में सार्थक बन सके।

स्वयंसहायता समूह की अवधारणा जहां अधिकतर गरीब परिवारों के जीवनस्तर को ऊपर उठाने और उन्हें किसी लघु उद्यम से जोड़ने से जुड़ी है वही किसान क्रेडिट कार्ड योजना का उद्देश्य किसानों को सूदखोरों के जाल से मुक्त करना और उन्हें समय पर पैसा उपलब्ध कराना है। यह योजना भारतीय रिजर्व बैंक और नाबार्ड की संयुक्त पहल पर तैयार की गई। इसे वर्ष 1998–99 में लागू किया गया। किसान क्रेडिट कार्ड का उद्देश्य बैंकिंग व्यवस्था से किसानों को समुचित और यथासमय सरल एवं आसान तरीके से आर्थिक सहायता दिलाना है ताकि खेती एवं जरूरी उपकरणों की खरीद के लिए उनकी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। इस योजना के जरिए किसान सरल प्रक्रिया से अपनी जरूरतों को पूरा कर सकते हैं।

निश्चित तौर पर इस योजना से किसानों को काफी फायदा हुआ है। यही नहीं बल्कि बैंक भी किसानों को ऋण देने में ज्यादा रुचि ले रहे हैं क्योंकि किसान कभी भी बैंक का पैसा हजम करने की कोशिश नहीं करते हैं। वे बैंक से लोन लेते हैं और ब्याज सहित समय पर उसे अदा करते हैं। अपवादस्वरूप कुछ किसानों को छोड़ दिया जाए तो आमतौर पर अधिकतर किसान अपने लोन को समय पर अदा कर देते हैं। इसीलिए बैंकों को किसानों के खिलाफ ज्यादा कार्रवाई नहीं करनी पड़ती है। अगर किसी किसान ने ऋण नहीं भी चुकाया तो उसकी स्थाई सम्पत्ति से बैंक का पैसा वसूल हो जाता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में ग्रामीण ऋण व्यवस्था के स्वरूप में पिछले 10–15 वर्षों में बड़े सकारात्मक परिवर्तन आए हैं और उनसे ग्रामीण लोगों के जीवनस्तर में सुधार आया है। किंतु अभी भी एक बड़ा तबका इन लाभों से वंचित है। आज जरूरत इस बात की है कि वंचित वर्ग तक भी ये सुविधाएं शीघ्रातिशीघ्र पहुंचाई जाएं और सरकारी तंत्र की लचर व्यवस्था को थोड़ा जनसहयोगी बनाया जाए ताकि आम ग्रामीण जन को सरकारी तंत्र से ऋण लेना एक कठिन प्रक्रिया न लगे और वे सरकार द्वारा बड़े पैमाने पर उपलब्ध कराए जा रहे ऋणों का लाभ उठा सकें।

गरीबों का भविष्य संवारती सामुदायिक अल्पबचत समितियां

डॉ. हेमलता झांकोदिया

ग्रामीण क्षेत्रों में जहां सरकारी व बैंकिंग व्यवस्था इतनी लचर रहती है कि अति सक्षम व्यक्ति को भी ऋण प्रबन्धन में पसीने आ जाएं, वहां स्व–वित्तपोषित, स्वप्रबन्धित, स्वचालित तथा पूर्णतः गैर–परम्परागत सामुदायिक वित्त व्यवस्था की नींव रखना वास्तव में एवरेस्ट पर चढ़ाई से भी उच्चतर उपलब्धि है। भजीट ग्राम जोकि राजस्थान के अलवर जिले के जिला मुख्यालय से लगभग 10 कि.मी. दूर स्थित है, वहां के निवासियों ने यही कारनामा कर दिखाया है। यहां गैर–पारम्परिक सामुदायिक वित्त समितियां जिन्हें आम बोलचाल में "अल्प बचत समितियों" की संज्ञा दी गई है, आज के समस्त लघुवित्त प्रबन्धकों के लिए एक अध्ययन का विषय बनने की योग्यता रखती हैं।

ग्रामीण व शहरी निर्धनों का सूदखोरों द्वारा शोषण कोई नई बात नहीं है तथा यह केवल अकेले भारत की ही विडम्बना नहीं है बल्कि समस्त विश्व में गरीबी से जूझते हुए जन सामान्य की यही नियति है। निर्धनतम परिवारों को बचत के सीमित संसाधनों तथा सीमित आमदनी से केवल दो जून की रोटी ही नसीब होती है परन्तु बीमारी के इलाज तथा शादी इत्यादि जैसे पारिवारिक आयोजनों के लिए बड़ी पूंजी की आवश्यकता पड़ती रहती है जिसके लिए वे सूदखोर महाजनों व बड़े किसानों के चंगुल में फंसते हैं और फंसते ही चले जाते हैं। इस ऋण को पीढ़ी दर पीढ़ी चुकाते रहना उनके और उनकी आने वाली पीढ़ियों के भाग्य की परिणति बन कर रह जाता है। ऋण चुकाने की इस प्रक्रिया में कितने ही निर्धन परिवारों की पूर्वजों द्वारा छोड़ी गई भूमि के छोटे–छोटे टुकड़े भी सूदखोर महाजनों व बड़े किसानों ने हड़प लिए तथा उन्हें भूमिहीन मजदूर बनने पर मजबूर कर दिया। आवश्यकतानुसार समय पर ऋण मिलते रहने के लालच में इन निर्धन परिवारों के कई सदस्य तो लगभग वर्षभर सूदखोर महाजनों व बड़े किसानों के खेत व खलिहानों में बेगार तक करने के लिए उपलब्ध रहते हैं।

भजीट ग्राम में सामुदायिक अल्पबचत समितियों की स्थापना पूर्णतः आवश्यकता जनित मानी जा सकती है। 1990 के दशक

के अन्तिम वर्षों में ग्राम के सूदखोर महाजनों व बड़े किसानों के चंगुल से छुटकारा पाने के लिए कुछ निर्धन (खेतीहर मजदूर, खेतीहीन व श्रमिक वर्ग के) परिवारों के स्वाभिमानी मुखियाओं ने मिल–बैठ कर यह निर्णय लिया कि अल्पबचत व अचानक आने वाली ऋणों की आवश्यकता की पूर्ति हेतु कोई अपनी ही व्यवस्था की जाए। बस फिर क्या था', अप्रैल माह के प्रथम सप्ताह की किसी एक तारीख का निर्णय कर वे एकत्रित हुए तथा अपनी गत माह की जमापूंजी में से कुछ अंश स्वनिर्णित ढंग से एकत्रित कर, एक धनराशि जुटाई गई। न्यूनतम ब्याज दर का निर्णय लेकर, जमा धनराशि में से ही अत्यधिक जरूरतमंदों को आवश्यकता की वरीयता के आधार पर लघु ऋण वितरित कर दिए तथा लेखा–जोखा रखने के लिए एक साधारण से रजिस्टर में हिसाब–किताब लिख लिया। इस प्रक्रिया को कुछ सरलतम नियम बनाकर आने वाले महीनों में दोहराया गया और देखते ही देखते एक सुदृढ़ एवं स्वावलम्बी वित्त–प्रणाली तैयार हो गई।

प्रारम्भिक दौर में सूदखोरों व उनके गुरगों और उनकी गुलामी में पल रहे कुछ मजबूर निर्धन परिवारों ने इस व्यवस्था का मजाक बनाया तथा फब्तियां भी कसी कि यह अधिक समय तक चलने वाली व्यवस्था नहीं है तथा कभी भी सदस्यों के मध्य अनबन और फूट पनपने पर यह समिति बिखर कर रह जाएगी। लेकिन आश्चर्यजनक रूप से, यह समिति एक वर्ष नहीं पूरे पांच वर्ष तक व्यवधान–रहित चलती रही तथा इसके सदस्यों में भी वृद्धि हुई और ऋण हेतु उपलब्ध धनराशि भी बढ़ती गई। इस चमत्कारिक घटना का सबसे बड़ा कारण रहा समिति के सदस्यों द्वारा पालन किए जाने वाला सरल किन्तु दृढ़ता से प्रक्रियारत विधान। यह विधान बनिस्पत अलिखित व परम्परागत नियमों पर आधारित होने के भी पूर्णतः सफल है। इसके बारे में अब हम विस्तार से चर्चा कर सकते हैं।

संगठनात्मक संरचना

गैर–पारम्परिक सामुदायिक वित्त समिति की प्राथमिक संगठनात्मक संरचना अत्यन्त ही सरल और साधारण होती है। एक चार सदस्यीय कार्यकारी समूह के अतिरिक्त सभी अन्य सामान्य सदस्य होते हैं। कार्यकारी समूह में एक अध्यक्ष के अतिरिक्त एक सचिव, एक लेखाकार एवं एक कोषाध्यक्ष होता है। यद्यपि कार्यकारी समूह के पास सामान्य सदस्यों की तुलना में कोई विशेष शक्तियां नहीं होती हैं तथापि यह समूह धन एकत्रण, ऋण वितरण व ब्याज गणना के लिए पूर्णतः जिम्मेदार होता है।

आगे हम देखेंगे कि गणना इतनी आसान होती है कि एक निरक्षर व्यक्ति भी अपना हिसाब–किताब स्वयं रख सकता है, और यही इस प्रणाली के शीघ्र–विस्तारण व अति लोकप्रियता का मुख्य कारण और कारक है। कार्यकारी समूह की आवश्यकता का मुख्य कारण तलपट, रोकड़–बही व ब्याज गणना इत्यादि के संचालन हेतु पढ़े–लिखे सदस्यों की आवश्यकता है। कार्यकारी समूह चूंकि स्वयं भी समिति के सदस्य होते हैं अतः उन्हें इस कार्य के लिए अलग से कोई मानदेय देने की आवश्यकता नहीं होती है। कार्यकारी समूह का काम होता है कि वह कभी भी एक या दो घण्टे बैठ कर समिति की मासिक बैठक से पूर्व ही सारा हिसाब–किताब लगाकर रखे ताकि बैठक के समय

सामुदायिक वित्त समिति की मासिक बैठक में कार्यकारी समूह तल्लीनता से हिसाब–किताब निबटाते हुए

केवल अति अनिवार्य कार्य ही बचे रहें।

सामान्य वित्तीय प्रक्रिया

सामान्यतया सर्वसम्मति से तय कर अप्रैल माह (या जनवरी) की 5, 7 या 9 दिनांक मासिक बैठक के लिए निश्चित की जाती है ताकि इस तिथि की वेतन की तिथि से पर्याप्त दूरी बनी रहे। समिति में सम्मिलित होने वाले समस्त सदस्य जब प्रथम बार एकत्रित होते हैं तो प्रत्येक सदस्य एक तय राशि जमा कराता है। यह राशि सामान्यतया 5000, 10000,15000 या 20000 रुपये तक हो सकती है। इस प्रारम्भिक हिस्सा राशि के अतिरिक्त प्रथम माह की मासिक किस्त, जोकि 100 रुपये से 500 रुपये तक हो सकती है, भी प्रत्येक सदस्य को जमा करानी होती है। इस प्रकार एकत्रित समूल धनराशि, उसी दिन ऋण के रूप में वितरित करने के लिए उपलब्ध रहती है।

सामुदायिक वित्त समिति की मासिक बैठक

ऋण वितरण प्रक्रिया अत्यन्त ही सरल व पूर्णतः पारदर्शी होती है जिसका विवरण विस्तार से आगे करेंगे। मध्य माहों की आने वाली समस्त बैठकों में ब्याज एकत्रण, मासिक किस्त एकत्रण तथा उपलब्धि के आधार पर ऋण वितरण का कार्य पूरे 12 माह तक चलता जाता है। उपरोक्त समस्त प्रक्रिया इतनी सरल है कि किसी भी सदस्य को चाहे वह किसी भी स्तर तक पढ़ा–लिखा हो या निरक्षर ही क्यों न हो, समझने में कोई समस्या नहीं आती है।

वित्तीय प्रक्रिया के नियम

इस तथ्य को झुठलाया नहीं जा सकता कि संस्था की संरचना कितनी भी सरल हो परन्तु एक सुदृढ़ अनुशासनात्मक विधान की अनुपस्थिति में उसकी सफलता असंभव है। इसी तथ्य को भजीट ग्राम के निवासियों ने भी भली–भांति जान लिया तथा उन्होंने भी अपने अच्छे–बुरे अनुभवों से सीख कर एक नियमावली तैयार की और उसे दृढ़ता से लागू भी किया। आइए इस नियमावली पर एक सरसरी दृष्टि डालते हैं।

गैर–वित्तीय नियम

- वर्ष की प्रथम मासिक बैठक में ही आगामी 11 माह की मासिक बैठकों की एक तिथि सर्वसम्मति से तय हो जाती है उस तिथि का वर्ष–भर पालन करना समस्त सदस्यों के लिए अनिवार्य होता है। यदि किसी कारणवश कोई सदस्य मासिक बैठक में उपस्थित नहीं हो सकता हो तो उसे किसी अन्य सदस्य या अपने परिवार के ही किसी सदस्य की मदद से बैठक में निर्धारित समय–सीमा के अन्दर अपनी उपस्थिति दर्ज करवा कर अपने समस्त दायित्व निभाने होते हैं।
- प्रत्येक मासिक बैठक की समय–सीमा ग्रीष्म ऋतु में रात्रि 10:00 बजे व शीत ऋतु में यह सीमा रात्रि 9:00 बजे निर्धारित है। उपरोक्त समय–सीमा के पश्चात किसी भी सदस्य को प्रक्रिया में भाग लेने का अधिकार नहीं है। विलम्ब से आने वाले सदस्य को वर्तमान बैठक में भाग लेने नहीं दिया जाता है तथा आगामी बैठक में उससें एक तयशुदा विलम्ब शुल्क वसूला जाता है।
- सदस्यों का मासिक बैठक में किसी भी प्रकार का नशा–पता

करके आना व झगड़ा करना वर्जित है। इस शर्त का कठोरता से पालन किया जाता है तथा उल्लंघन करने वाले सदस्य को अपनी सदस्यता से भी हाथ धोना पड़ सकता है।

- बैठक स्थल पर सदस्यों द्वारा आपस में किसी भी प्रकार का लेन–देन या ऋण सम्बन्धी समझौते करना वर्जित है। ऐसा कोई भी समझौता उन्हें बैठक–पूर्व ही कर लेना होता है।
- कोई भी नया सदस्य वर्ष भर का कार्यकाल समाप्त होने से पूर्व, मध्य के महीनों में सम्मिलित नहीं किया जा सकता है। यदि कोई सदस्य प्रारम्भ का केवल एक माह चूक जाता है तथा उसकी साख भी अच्छी है तो उसको सर्वसम्मति से द्वितीय माह में भी शामिल किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में इस नए सदस्य को गत (प्रथम) माह का विलम्ब शुल्क भी जमा कराना होता है।
- किसी भी सदस्य को उसकी जाति, धर्म, ऊंच–नीच या अमीरी–गरीबी या लिंगभेद के आधार पर नहीं आंका जाता है। सदस्यों को केवल उनकी वित्तीय साख (समय पर समिति के दायित्वों का निर्वहन करते रहने की क्षमता) तथा नियमों का पालन करते रहना ही समिति में बने रहने का ठोस आधार है।
- समिति का कार्यकाल केवल एक वर्ष ही निश्चित किया हुआ है जोकि जनवरी से दिसम्बर अथवा अप्रैल से मार्च तक रखा जाता है। वर्षान्त में एक महाबैठक आयोजित कर समस्त ऋणराशि मयब्याज के एकत्रित की जाती है तथा खर्चा–हर्जा काटकर जो भी राशि बचती है उसका वितरण समस्त सदस्यों में बराबर– बराबर बांट कर किया जाता है। तत्पश्चात पुनः सदस्य बनाए जाते हैं। इनमें से पुराने सदस्यों को वरीयता दी जाती है परन्तु जिन सदस्यों के कारण गत वर्ष अत्यधिक समस्याएं आईं उन्हें वापिस लेने का तथा किसी नए सदस्य को शामिल करने का निर्णय सर्वसम्मति से लिया जाता है। सामान्यतया कुल सदस्यों की संख्या 50 से अधिक नहीं रखी जाती है। वर्तमान में प्रचलित लगभग 10 समितियों में औसत सदस्य संख्या 40 है।

वित्तीय नियम

- समिति में सम्मिलित होने वाले समस्त सदस्य जब प्रथम बार एकत्रित होते हैं तो प्रत्येक सदस्य एक तय राशि जमा कराता है। यह राशि सामान्यतया 5000, 10000,15000 या 20000 रुपये तक हो सकती है। इस प्रारम्भिक हिस्सा राशि के अतिरिक्त प्रथम माह की मासिक किस्त, जोकि 100 रुपये से 500 रुपये तक हो सकती है, भी प्रत्येक सदस्य को जमा करानी होती है। इस प्रकार एकत्रित समूल धनराशि, उसी दिन ऋण के रूप में वितरित करने के लिए उपलब्ध रहती है।
- ऋण वितरण, सदस्यों की आवश्यकता व अनिवार्यता को ध्यान में रख कर किया जाता है। सामान्यतया बच्चों की शादी, परिवार के किसी सदस्य या स्वयं की बीमारी के इलाज हेतु, गृह–निर्माण के अधूरे कार्य को पूर्ण कराने हेतु या अन्य किसी पारिवारिक मजबूरी को टालने के लिए अथवा व्यवसाय में धन लगाने हेतु इत्यादि आवश्यकताओं की वरीयता के आधार पर दिया जाता है। केवल ऋण चुकाने के लिए अथवा ऋण पर धन देने के लिए समिति द्वारा ऋण नहीं दिया जाता है।
- ब्याज की सामान्य दर 2 प्रतिशत प्रति माह रखी जाती है जो कि एक सरल ब्याज दर है तथा 24 प्रतिशत वार्षिक होती है। यह दर सूदखोर महाजनों के 3, 4, या 5 प्रतिशत से कम है साथ ही उनकी तरह त्रैमासिक चक्रवृद्धि भी नहीं है।
- एक परिवार के एक ही सदस्य को समिति की सदस्यता प्रदान की जाती है। परन्तु मूल सदस्य की साख व गारंटी के आधार पर परिवार के मात्र एक और अतिरिक्त सदस्य को सदस्यता दी जा सकती है। यदि एक ही परिवार के दोनों सदस्यों को ऋण की आवश्यकता पड़ती है तो, ऐसी स्थिति में एक बार में केवल एक सदस्य को ही ऋण दिया जा सकता है।
- ऋण की राशि उपलब्धता के आधार पर 5000 रुपये से लेकर 20000 रुपये तक हो सकती है।
- ऋण के पुनर्भुगतान की शर्त अति सुलभ होती है तथा ऋणी सदस्य द्वारा मूलधन के 100 रुपये (ऋण के) प्रति हजार रुपये प्रति माह के अतिरिक्त गत माह का ब्याज भी देय होता है। इस प्रकार अगले माह ब्याज केवल शेष बचे हुए मूलधन पर ही लगता है। यह तरीका बैंकों के घटती धनराशि पर वसूले जाने वाले ब्याज के जैसा ही है परन्तु अत्यधिक सरल व लम्बी–चौड़ी गणनाओं से रहित है।
- ऋण प्राप्त करने वाले प्रत्येक सदस्य से 5 रुपये (प्रत्येक ऋण के ग्रहण करने पर) केवल एक बार ही अतिरिक्त लिया जाता है जिसे स्टेशनरी इत्यादि के व्यय में खर्च किया जाता है।
- यदि अन्तिम माह में ऋण के मूलधन की राशि केवल 100 रुपये या इससे भी कम बचती है तो उस पर ऋणी सदस्य को कोई ब्याज देय नहीं होता है।
- ऋण के लिए इच्छुक सदस्य को अपने आवेदन के साथ ही एक अन्य सदस्य की गारंटी भी प्रस्तुत करनी होती है। गारंटर सदस्य सह–ऋणी नहीं हो सकता है।

- पूर्व से ही चले आ रहे ऋणी सदस्य को पुनः ऋण तभी सम्भव है जबकि समिति के पास अन्य कोई नए ऋणी का आवेदन लम्बित नहीं हो। ऐसी स्थिति में भी ऋणी सदस्य व उसके गारंटर सदस्य की साख देखी जाती है। अन्यथा ऐसी स्थिति में शेष धनराशि समिति के पास ही रहती है। परन्तु ऐसा सामान्यतया होता नहीं है, क्योंकि ऐसी शेष बची हुई धनराशि को कोई भी गैर–जरूरत वाला सदस्य ऋण पर लेकर किसी भी आवश्यकता वाले सदस्य को दे देता है। लेकिन ऐसा वे केवल समिति के बाहर ही कर सकते हैं।
- यदि कोई ऋणी सदस्य मूलधन या ब्याज की राशि के समय पर भुगतान में असमर्थ रहता है तो उसे 51 रुपये का दण्डात्मक शुल्क देना होता है। दो बार चूकने की स्थिति में उसे 101 रुपये का दण्डात्मक शुल्क देना होता है। इसी प्रकार यदि कोई सदस्य मासिक सदस्यता राशि के समय पर भुगतान में असमर्थ रहता है तो उसे 11 रुपये का दण्डात्मक शुल्क देना होता है। तीन बार चूकने की स्थिति में ऋणी सदस्य अथवा उसके गारंटर से समूल ऋण की राशि ब्याज के तुरन्त वसूल की जाती है तथा उसे सदस्यता से भी निलम्बित अथवा निष्कासित किया जा सकता है।
- वर्षान्त में जब समस्त ऋण पर दिया हुआ मूलधन व उस पर अर्जित ब्याज की राशि एकत्रित की जाकर सभी सदस्यों में पुनः वितरित की जाती है तो प्रत्येक सदस्य तब तक अपनी मूल धनराशि को 25 से 30 प्रतिशत तक बढ़ा हुआ पाता है। साथ ही अपनी पारिवारिक वित्तीय व्यवस्था को भी अधिक व्यवस्थित व प्रबन्धित करने में सफल रहता है।

सामुदायिक वित्तीय व्यवस्था से सामाजिक उत्थान में योगदान

यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है कि भजीट ग्राम की गैर–पारम्परिक सामुदायिक वित्तीय व्यवस्था ने सामाजिक उत्थान में अभूतपूर्व योगदान दिया है। आज इस व्यवस्था ने ग्रामवासियों को अपना व्यवसाय चलाने अथवा अन्य पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक पूंजी को सरलतम ब्याज दरों पर उपलब्ध करवा कर उन्हें सूदखोरों के चंगुल से पूर्णतः मुक्त करवा दिया है। साथ ही बचत को एक आदत के रूप में ग्रामीणों के आचरण का हिस्सा बना दिया है। इतना ही नहीं, ब्याज के अतिरिक्त समिति के पास दण्डात्मक शुल्क इत्यादि से जो भी अतिरिक्त धन जमा होता है उससे सर्वसम्मति से निर्धन कन्याओं के विवाह समारोहों में उपहार दिए जाते हैं तथा मन्दिरों व धर्मशालाओं में भी दान–दक्षिणाएं दी जाती हैं। इन समस्त सामाजिक दायित्वों के निर्वहन व समिति के सदस्यों में जाति, धर्म, ऊंच–नीच या अमीरी–गरीबी के आधार पर भेदभाव के पूर्णतः समाप्त होने से ग्रामीण जनजीवन के ताने–बाने को और भी मजबूती प्रदान की है।

आज अकेले भजीट ग्राम में ही लगभग 10 सामुदायिक वित्तीय समितियां सफलतापूर्वक कार्यरत हैं। इनकी सफलता से प्रेरणा लेकर पड़ोसी गांवों ने भी अपने यहां ऐसी समितियों का गठन करना प्रारम्भ कर दिया है। परिणामतः सूदखोर व महाजनों की स्थिति दयनीय हो गई है। जहां वे 3 से 5 प्रतिशत मासिक की दर (कभी–कभी तो 10 प्रतिशत मासिक तक भी) से ऋण देते थे, जिसे चुकाने में ऋणी व्यक्ति की भावी पीढियां भी शोषित होती रहती थी, उसकी जमीन–जायदाद सब छिन जाती थी, आज इन्हीं सूदखोर व महाजनों से लोग 2 प्रतिशत मासिक की दर से भी ऋण लेने को तैयार नहीं है। इन परिवर्तित परिस्थितियों में सूदखोर व महाजनों ने भी स्वयं को सामुदायिक वित्तीय समितियों का ही सदस्य बनाना उचित समझा।

ऐसा नहीं है कि सामुदायिक वित्तीय समितियों का विचार पूर्णतः नवीन है क्योंकि शहरों के छोटे और मझोले दुकानदारों में यह व्यवस्था वर्षों से चली आ रही है जिसे विभिन्न क्षेत्रीय नामों से जाना जाता है परन्तु ग्रामीण अंचल के निर्धन परिवारों के बीच, बिना किसी सरकारी सहायता के इसकी सफलता एक प्रशंसनीय व अनुकरणीय उदाहरण है।

वर्तमान समय में सरकारों द्वारा गरीबों को ऋण देने व उन्हें सूदखोरों व महाजनों से बचाने की कई योजनाएं समय–समय पर घोषित की जाती हैं परन्तु ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत सरकारी दफतरों व बैंकों में कार्यरत कर्मचारियों–अधिकारियों की कभी पूरी न की जा सकने वाली शर्तों के कारण निर्धन वर्ग को कभी ऋण नसीब नहीं होता। इसके उलट, रसूख वाले धनी लोग इन योजनाओं का लाभ उठाते रहते हैं। ऐसी विकट परिस्थितियों में भजीट ग्राम की सामुदायिक वित्तीय समितियां आने वाले नए सवेरे की ओर एक सुदृढ़ कदम है तथा निर्धन परिवारों के लिए एक वरदान। भजीट ग्राम की गैर–पारम्परिक सामुदायिक वित्तीय समितियों की सफलता की यह कहानी देश के अन्य भागों में निवास करने वाले ग्रामीण जनमानस तक पहुंचे, इसी प्रयास के तहत यह लघु–अध्ययनात्मक लेख समर्पित है।

(लेखिका राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा में राजनीति विज्ञान की व्याख्याता हैं।)
ई–मेल : hemankodia@yahoo.co.in

ग्रामीण ऋण व्यवस्था का बदलता स्वरूप

डॉ. सुमन पामेचा एवं एकता झा

पहले ऋण प्राप्त करने में ग्रामीणों को काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता था पर आजकल गांवों में ही बैंक खुलने, तथा ऋण देने वाली संस्थाओं का विस्तार होने से इन्हें आसानी से ऋण प्राप्त हो जाता है जिससे वह अपने कृषि कार्य आदि बड़ी आसानी से पूरे कर रहे हैं। शिक्षित ग्रामीण बैंकों से ऋण लेकर लघुकुटीर उद्योग भी चला रहे हैं जिससे लाखों युवाओं को रोजगार उपलब्ध हुआ है एवं उनके आर्थिक स्तर में भी सुधार हुआ है।

भारत में कृषि देश का प्रमुख उद्योग है, परन्तु इसके साख की हीन दशा है। न तो कृषि साख पर्याप्त मात्रा में ही उपलब्ध होती है और न सही व्यक्ति को सही समय पर मिलती है। कृषि की प्रकृति ऐसी विचित्र है कि कृषक को केवल उत्पादक ऋणों की ही नहीं वरन् अनुत्पादक ऋणों की भी आवश्यकता होती है। उन्हें चालू खर्चों–बीज, खाद, मजदूरी भुगतान व लगान आदि चुकाने के लिए ऋण की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार किसानों को प्रतिवर्ष लगभग 10 हजार करोड़ की साख की

आवश्यकता होती है। आज भी लगभग 48.6 प्रतिशत किसान परिवार ऋण बोझ से दबे हुए हैं। आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक और महाराष्ट्र में ऋणग्रस्त परिवारों का औसत 48.6 प्रतिशत से काफी ऊंचा है। कृषि ऋणग्रस्तता की समस्या को सुलझाने के लिए भारत सरकार ने इन्दिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान के निदेशक की अध्यक्षता में एक विशेष दल का गठन भी किया है।

ग्रामीण ऋणग्रस्तता के कारण

कम आय व निर्धनता:– ग्रामीण ऋणग्रस्तता का सबसे प्रमुख व महत्वपूर्ण कारण ग्रामीण क्षेत्रों में आय का कम होना एवं उनके पास आपत्तिकाल के लिए कोई कोष न होना है। इसका परिणाम यह होता है कि असाधारण आपत्ति में ऋण लेना पड़ता है जिसको वे अपनी कम आय होने के कारण लौटा नहीं पाते हैं और सदा ऋणग्रस्त बने रहते हैं।

पैतृक ऋण:– ग्रामीणों को यह ऋण विरासत में मिलते हैं जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलते हैं। ऐसा होने से वे ऋणों को लेना बुरी बात नहीं मानते हैं और उनकी यह मनोवृत्ति ऋण लेने के लिए प्रेरित करती है।

सामाजिक व्यय:– भारतीय कृषक सादा जीवन बिताता है, लेकिन सामाजिक रूढ़ियों में जकड़ा होने के कारण बेकार के व्ययों से बच नहीं सकता है और उसको जन्म, मृत्यु, शादी–विवाह आदि पर अपनी प्रतिष्ठा के अनुसार व्यय करना पड़ता है जिसको पूरा करने के लिए ऋण लेना पड़ता है।

मूल्य–स्तर में वृद्धि:– पिछले पन्द्रह वर्षों में सामान्य मूल्य–स्तरों में कई गुना वृद्धि हुई है, लेकिन गैर–कृषि श्रमिकों की मजदूरी उस अनुपात में नहीं बढ़ी है जिस अनुपात में मूल्य स्तरों में वृद्धि हुई है। परिणामस्वरूप उनको व्ययों की पूर्ति हेतु ऋण लेने के लिए बाध्य होना पड़ता है।

भूमि पर जनसंख्या के भार में वृद्धि:– भूमि पर जनसंख्या के भार में वृद्धि होने से खेत छोटे–छोटे टुकड़ों में बंट जाता है तो पूरे परिवार के पेट भरने तक के लिए भी खाद्यान्नों का उत्पादन नहीं हो पाता है। फलतः ऋण लेकर ही काम चलाया जाता है।

अन्य कारण:– ग्रामीण क्षेत्रों में ऋणग्रस्तता के अन्य कारण भी हैं:–

- भूमि का मूल्य बढ़ने से कृषक की ऋण प्राप्त करने की क्षमता में वृद्धि।
- गांवों में व्यवस्थित बाजार का अभाव जहां कृषक उचित मूल्य पर अपनी उपज बेच सके।
- भूमि के छोटे टुकड़ों पर कृषि का अनार्थिक होना।
- ग्रामीण अर्थव्यवस्था में मुद्रा का उचित स्थान मिलना।

ग्रामीण साख की आवश्यकता

अल्पकालीन ऋण:– इसके अंतर्गत खेतीबाड़ी या घरेलू आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 15 माह से भी कम समय के लिए धन की आवश्यकता पड़ती है। बीज, उर्वरक तथा पारिवारिक आवश्यकताओं के लिए अल्पकालीन ऋण की मांग की जाती है।

मध्यकालीन ऋण:– इसके अन्तर्गत भूमि में सुधार करने के लिए, पशु खरीदने के लिए तथा कृषि उपकरण प्राप्त करने के लिए 15 माह से 5 वर्ष तक की अवधि के लिए प्राप्त किए गए ऋणों को शामिल किया जाता है।

दीर्घकालीन ऋण:– इसके अन्तर्गत भूमि खरीदने, भूमि पर स्थायी सुधार करने, पुराने ऋणों का भुगतान करने तथा महंगे कृषि यन्त्र खरीदने के लिए 5 वर्ष से अधिक समयावधि के ऋणों को सम्मिलित किया जाता है।

स्रोत

भारत में किसान अपनी उपर्युक्त आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु दो प्रकार के स्रोतों से ऋण प्राप्त करते हैं– गैर–संस्थागत स्रोत, संस्थागत स्रोत।

- **गैर–संस्थागत स्रोत:–** साहूकार, व्यक्ति, सम्बन्धी एवं भू–स्वामी आदि को सम्मिलित किया जाता है। वर्तमान में 35 प्रतिशत ऋण गैर–संस्थानगत स्रोत से उपलब्ध कराए जाते हैं।
- **संस्थागत स्रोत:–** सरकार, सहकारी समितियों तथा वाणिज्यिक बैंकों आदि को सम्मिलित किया जाता है। वर्तमान में 65 प्रतिशत ऋण संस्थागत स्रोत से उपलब्ध कराए जाते हैं।

कृषि साख की कुल राशि 1992–93 में 15,169 करोड़ रुपये थी, जो 2006–07 में बढ़कर 2,03,297 करोड़ रुपये हो गई। जबकि 2007–08 के अंतर्गत 2,43,569 करोड़ रुपये के ऋण उपलब्ध कराए गए थे। कृषि को दिए कुल संस्थानात्मक ऋण में अल्पकालिक ऋण का अंश 2007–08 में 64 प्रतिशत जबकि मध्य तथा दीर्घकालिक ऋण का अंश 36 प्रतिशत अनुमानित किया गया है। कुल संस्थागत ऋण में सहकारी बैंकों का अंश 21 प्रतिशत, वाणिज्यिक बैंकों का 69 प्रतिशत तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का अंश 10 प्रतिशत अनुमानित किया गया है।

कृषि क्षेत्र को दिए जाने वाले संस्थागत ऋण

केन्द्र सरकार द्वारा तय की गई नीति के तहत निजी एवं सार्वजनिक दोनों ही क्षेत्रों के बैंकों को अपने कुल ऋणों का 40 प्रतिशत प्राथमिकता क्षेत्र को उपलब्ध कराना होता है। कुल ऋण राशि का 18 प्रतिशत भाग कृषि क्षेत्र को उपलब्ध कराने का भी प्रावधान ऋण नीति में शामिल है। किन्तु मीडिया में प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार 2005–06 के दौरान भारतीय स्टेट बैंक ने अपने कुल ऋणों का 14.30 प्रतिशत कृषि क्षेत्र को उपलब्ध कराया था जबकि निजी क्षेत्र के आईसीआईसीआई बैंक द्वारा कृषि के लिए प्रदान ऋण उसके कुल ऋणों का 16.80 प्रतिशत था। सार्वजनिक क्षेत्र के ही बैंक ऑफ इण्डिया ने 18 प्रतिशत के लक्ष्य को पार करते हुए अपनी कुल ऋण राशि का 19.36 प्रतिशत भाग कृषि क्षेत्र को उपलब्ध कराया था।

राष्ट्रीय कृषक साख योजना

क्रॉप एग्रीकल्चर प्रोड्यूज लोन स्कीम:– किसानों को अपनी उपज का बेहतर मूल्य प्राप्त होने तक उपज को रोकने में सक्षम बनाने के लिए कॉर्पोरेशन बैंक द्वारा एक नई कृषि ऋण योजना 1 अप्रैल, 2005 से प्रारम्भ की गई है। क्रॉप एग्रीकल्चर प्राड्यूस लोन नाम की यह ऋण योजना मल्टी कमोडिटी एक्सचेंज ऑफ इंडिया के सहयोग से प्रारम्भ की गई। इस ऋण योजना के चलते किसान अपनी उपज का सेंट्रल वेयर हाऊसिंग कॉर्पोरेशन

कृषि क्षेत्र को दिए जाने वाले संस्थागत ऋण

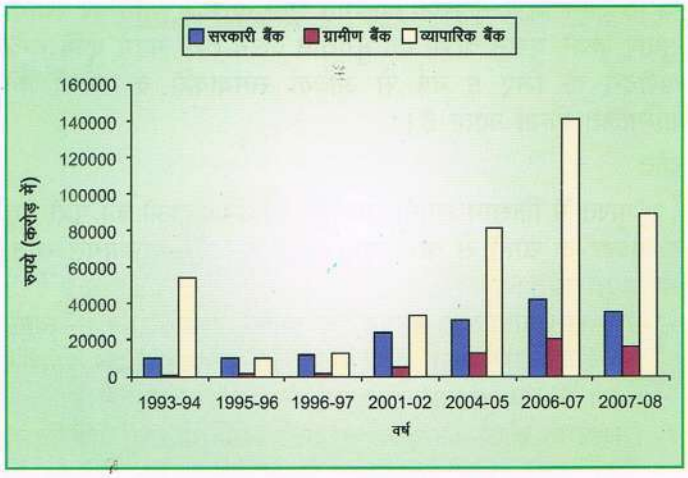

अथवा स्टेट वेयर हाऊसिंग कॉर्पोरेशन के किसी गोदाम में भंडारण करके उसकी रसीद के आधार पर कॉर्पोरेशन बैंक से ऋण प्राप्त कर सकते हैं।

वर्षा बीमा योजना– भारतीय कृषि बीमा कंपनी लि. ने दक्षिण–पश्चिमी मानसून अवधि 2004 के दौरान 'वर्षा बीमा' नामक बीमा योजना शुरू की तभी बीमा में कृषक समुदाय की भिन्न–भिन्न जरूरतों के अनुसार अलग–अलग विकल्पों की व्यवस्था की गई है–

- जून से सितम्बर तक कुल वर्षा के आधार पर मौसमी वर्षा बीमा।
- जून और सितम्बर के बीच वर्षा की मात्रा के अनुसार वर्षा वितरण बीमा।
- 50 प्रतिशत तथा बेहद प्रतिकूल विसामान्यता और मौसम के दौरान अधिक वर्षा, आन्ध्र प्रदेश, कर्नाटक, राजस्थान और उत्तर प्रदेश के 20 वर्षामापी क्षेत्र में 2004–05 में वर्षा बीमा प्रायोगिक योजना के रूप में शुरू की गई थी।

किसान क्रेडिट कार्ड योजनाः– वर्ष 1998–99 में शुरू की गई किसान क्रेडिट योजना किसानों को अधिक ऋण दिलाने में सफल रही है। वर्ष 2002 में किसान क्रेडिट कार्ड से संबद्ध वैयक्तिक बीमा पैकेज कार्यान्वित किया गया है। किसान क्रेडिट कार्ड के अन्तर्गत वितरित ऋण भी साधारण बीमा निगम की राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना के अधीन लाए गए हैं। किसान क्रेडिट कार्डधारकों को मृत्यु पर 50,000 रुपये और स्थायी विकलांगता पर 25,000 रुपये की वैयक्तिक दुर्घटना बीमा रक्षा दी गई है। वर्ष 2007–08 के दौरान जारी किए गए किसान क्रेडिट कार्डों की कुल संख्या 85.11 लाख थी, जिसमें 46,729 करोड़ रुपये की स्वीकृत राशि थी। नवम्बर 2007 तक स्वीकृत राशि 25,263 करोड़ रुपये थी।

किसानों के लिए ऋण माफी योजनाः– 2008–09 के केन्द्रीय बजट में छोटे एवं सीमांत किसानों के 60,314 करोड़ रुपये के ऋणों की माफी की घोषणा की गई है। यह योजना 2008 में पूरी हो गई है। सरकार ने इस योजना का विस्तार करते हुए किसानों को खाद, बैलगाड़ी, पम्पसेट और पशुओं की खरीद आदि जैसे कार्यों के लिए दिए गए ऋणों को भी ऋण माफी योजना के तहत् ला दिया है। इस ऋण माफी की राशि 60,314 करोड़ रुपये से बढ़कर 71,680 करोड़ रुपये हो गई है।

ग्रामीण ऋणग्रस्तता को दूर करने के उपाय

पुराने ऋणों की समाप्तिः– प्रान्तीय सरकारों ने समय–समय पर पुराने ऋणों को समाप्त करने के उद्देश्य से कानून बनाए हैं। 1879 में क्षेत्रीय कृषक राहत अधिनियम पास किया गया। 1934 में "पंजाब ऋण समझौता अधिनियम" पास किया गया जिसमें ऋणदाता व ऋणी की सहमति से ऋण कम करने तथा उसे किस्तों में देने की व्यवस्था थी। केन्द्रीय सरकार ने 19 मार्च, 1990 को अपना बजट प्रस्तुत करते समय 10,000 रुपये तक के कर्ज माफ करने की घोषणा की थी। जिसके अनुसार 7,560.88 करोड़ रुपये के ऋण माफ किए गए हैं जिसमें 3 करोड़ किसानों, कलाकारों व कारीगरों को लाभ हुआ है।

साहूकारों पर नियंत्रणः– विभिन्न राज्यों में साहूकारों व महाजनों पर कई प्रकार के प्रतिबन्ध लगा दिये गए हैं जिनकी शुरुआत 1930 के बाद हुई है। इन प्रतिबन्धों में ब्याज दर पर प्रतिबन्ध, उचित लेखों को रखने की अनिवार्यता एवं साहूकार व महाजनों का अनिवार्य पंजीकरण शामिल है।

सहकारी संस्थाओं का विस्तारः– भारत में इस शताब्दी के प्रारम्भ से ही सरकार का यह प्रयत्न रहा है कि सरकारी साख संस्थाओं का ग्रामीण क्षेत्र में विस्तार किया जाए। इसके लिए सरकारें इनकी पूंजी के अंश क्रय करती है, ऋण देती हैं तथा मार्गदर्शन करती हैं।

व्यावसायिक बैंकों का विस्तारः– पिछले कुछ वर्षों में सरकार की यह नीति रही है कि बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी अधिक शाखाएं खोलें। इसी का परिणाम है कि अब 51 प्रतिशत शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में हैं।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापनाः– 26 सितम्बर, 1975 को एक अध्यादेश जारी कर 50 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की व्यवस्था की गई थी, लेकिन 30 जून 1997 तक 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक स्थापित किए जा चुके हैं। 2007–08 में यह बढ़कर 248 हो गए हैं। यह बैंक छोटे कृषकों, भूमिहीन श्रमिकों, दस्तकारों आदि के लिए खोले गए हैं।

निष्कर्ष

बैंकों की शाखा उपलब्ध होने से किसानों की भागदौड़ कम हुई है। पहले ऋण प्राप्त करने में ग्रामीणों को काफी मुश्किलों का सामना करना पड़ता था पर आजकल गांवों में ही बैंक खुलने, तथा ऋण देने वाली संस्थाओं का विस्तार हुआ है जिससे इन्हें आसानी से ऋण प्राप्त हो जाता है और यह अपने कृषि कार्य आदि बड़ी आसानी से पूरे कर रहे हैं। कुछ शिक्षित ग्रामीण तो बैंक से ऋण लेकर लघु कुटीर उद्योग भी चला रहे हैं जिससे कई युवाओं को भी रोजगार उपलब्ध हुआ है एवं इनके आर्थिक स्तर में भी परस्पर सुधार हुआ है। साथ ही पुराने ऋणियों को राहत मिली है। लेकिन अभी भी और द्रुतगामी गति से प्रयास करने की आवश्यकता है। आज जरूरत इस बात की है उत्पादक ऋण आसानी से कम ब्याज दर पर मिले और अनुत्पादक ऋणों में कमी की जाए।

(लेखिका राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग में सह–आचार्या हैं।)

सूदखोरों के जाल से किसान क्रेडिट कार्ड तक

डॉ. शम्भूनाथ यादव

सरकार के तमाम प्रयासों के बाद भी किसान सूदखोरों के जाल में फंसते रहे। जिसका नतीजा रहा कि नई पीढ़ी खेती से अपना नाता तोड़ने लगीं। ऐसे में सरकार ने किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड के जरिए ऐसा नायाब तोहफा दिया, जिसने करोड़ों लोगों को फिर से खेती से जोड़ दिया है। अब न सूदखोरी का चक्कर और न पैसे को लेकर चिंता। जिसके पास किसान क्रेडिट कार्ड है वह बेफिक्री से खेती कर रहा है और परिवार का भरण-पोषण करने के साथ ही भारत के विकास में अपने योगदान दे रहा है।

गांवों में रहने वाले अधिकतर लोगों की जीविका का साधन कृषि ही है। गांवों में जिनके पास खेत नहीं हैं, वे भी प्रत्यक्ष न सही लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से कृषि से जुड़े हुए हैं। कुल मिलाकर देखा जाए तो देश का एक बड़ा हिस्सा कृषि के सहारे जीविका चला रहा है। यही वजह है कि भारत सरकार कृषि सुधार एवं किसानों को लेकर हमेशा गंभीर रही है। फसल उत्पादन के प्रभावित होने का मतलब है देश की अर्थव्यवस्था का प्रभावित होना। क्योंकि जब खेत में फसल ही नहीं होगी तो हमें विदेश से आयात करना पड़ेगा। आयात की व्यवस्था से मुक्ति पाने के लिए ही कई बार हमारे प्रधानमंत्री तक को आगे आना पड़ा और एक दिन उपवास का संकल्प दोहराना पड़ा।

माना कि भारत के किसानों को अभी तक वे सुविधाएं नहीं मिल पाई हैं, जो अन्य कृषि प्रधान देशों के पास हैं। फिर भी केंद्र सरकार किसानों के हितों को लेकर हमेशा सजग रही है। इसके बाद भी कभी मौसम दगा दे जाता है तो कभी बाढ़ तो कभी सूखे के हालात ने किसानों की कमर तोड़ दी है। प्रकृति की विपरीत परिस्थितियों के कारण हालात यहां तक पहुंच गए कि किसान खेती से विमुख होने लगे। किसानों को लगा कि खेती अब घाटे का सौदा है। महाराष्ट्र सहित देश के विभिन्न हिस्सों से किसानों के आत्महत्या करने की खबरें आई। इन खबरों के पीछे मूल कारण यह था कि किसान एक तरफ प्रकृति की मार से परेशान थे, दूसरी तरफ वे सूदखोरी के जाल से बाहर नहीं निकल पा रहे हैं। सरकार के सामने यह एक बड़ी चुनौती थी। चूंकि सूदखोर महाजन किसानों को कभी खत्म नहीं होने वाले कर्ज़ के जाल में फंसा लेते। किस तरह उनकी ब्याज दरें व्यापारिक दरों की सीमा को लांघ जाती हैं। और किस तरह कानूनी तौर पर निर्धारित सीमा से कई गुना आगे निकल जाती हैं। इसका अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि किसान खेती

के चक्कर में पूरी तरह बर्बाद हो जाता है। आगे कुआं पीछे खाई की स्थिति में उसके सामने आत्महत्या के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचता। सरकार की ओर से किसानों की स्थिति की समीक्षा करने के लिए गठित विभिन्न कमेटियों ने भी इस बात को स्वीकार किया।

वर्ष 1981–82 में अखिल भारतीय ऋण में 139 फीसदी की बढ़ोतरी हुई। असम के अलावा देश के हर राज्य में किसान किसी न किसी रूप में सूदखोरों या महाजनों के जाल में फंसे थे। इस रिपोर्ट के बाद तत्कालीन सरकार ने सूदखोरों से किसानों को मुक्त कराने के लिए अभियान चलाया। लेकिन अफसोस यह अभियान ज्यादा कारगर नहीं हो पाया। वर्ष 1987 में रिजर्व बैंक आफ इंडिया को यह कहना पड़ा कि किसानों के लिए उसे जो राशि जारी की जा रही है उसका 60 फीसदी हिस्सा वित्तीय संस्थानों के जरिए दिया जा रहा है। इसके बाद भी छह फीसदी हिस्सा ही किसान परिवारों तक पहुंच पा रहा है। इस टिप्पणी के बाद सरकार ने सुधार का प्रयास किया। 1990 के दशक में आईआरडीपी के तहत किसानों को खेतीबाड़ी से विमुख होने से बचाने का प्रयास किया गया। लेकिन इस योजना में भी कुछ बंदरबांट चली। रिश्वतखोरी को बढ़ावा मिला। इससे किसानों को आठ हजार रुपये ऋण दिया गया। ब्याज दर 6.5 से 8 फीसदी रखी गई। सरकार की ओर से गठित टॉस्क फोर्स कमेटी ने योजना की स्थिति से तत्कालीन

प्रधानमंत्री और कृषि मंत्री को वाकिफ कराया था जिस पर सरकार ने योजना की मानिटरिंग में लगे कई अफसरों के खिलाफ कार्रवाई भी की थी। इतना ही नहीं किसानों को सस्ते दर पर पंपसेट सहित कृषि संबंधी अन्य उपकरणों के लिए भी ऋण की व्यवस्था की गई। लघु एवं सीमांत किसानों को शिविर लगाकर योजनाओं की जानकारी दी गई। यह प्रक्रिया आज भी जारी है।

देखा जाए तो आजादी के बाद से ही किसानों की दशा सुधारने की कोशिश की गई। यह अभियान चरण–दर–चरण चला। भूमि सुधार आयोग का गठन किया गया तथा किसानों की समस्याओं के निदान के लिए किसान आयोग तक का गठन किया गया। 1985 में फसल बीमा योजना शुरू की गई जो 23 राज्यों में चल रही है। गत वर्ष इस योजना से करीब 10 करोड़ किसानों को फायदा हुआ है। केंद्र सरकार को इस बात का हमेशा अहसास रहा है कि जब तक किसानों का विकास नहीं होगा तब तक देश का समुचित विकास नहीं हो सकता है। यही वजह है कि सरकार ने योजना आयोग के सदस्य सोमपाल की अध्यक्षता में राष्ट्रीय किसान आयोग का गठन किया। इस आयोग को जिम्मेदारी दी गई कि वह न सिर्फ भारतीय कृषि की स्थिति की समीक्षा करेगा बल्कि विभिन्न क्षेत्रों के किसानों की विभिन्न श्रेणियों की समस्याओं का भी मूल्यांकन करेगा। आयोग को यह भी जिम्मेदारी दी गई कि वह किसानों के बीच मौजूद असंतुलन का भी अध्ययन कर उनके निराकरण के लिए उपाय सुझाएगा। चूंकि गरीबी दूर करने के लिए कृषि जैव प्रौद्योगिकी, सूचना प्रौद्योगिकी के साथ ही मौसम के अनुरूप नई तकनीकी से खेती करने के लिए प्रेरित करना होगा। आयोग ने अपनी जिम्मेदारी का बखूबी निर्वहन किया। आयोग की सिफारिशों के आधार पर सरकार ने किसानों को संसाधनों से जोड़ने का बीड़ा उठाया और आज किसान एक बार फिर खेती से जुड़ते नजर आ रहे हैं।

सरकार से बढ़ी उम्मीदें : केंद्र सरकार की हमेशा कोशिश रही कि किसानों को अधिक से अधिक लाभ मुहैया कराया जाए। यही वजह है कि मौजूदा बजट में एक तरफ किसानों को सस्ती ब्याज दर पर ऋण मुहैया कराने की घोषणा की गई है तो दूसरी तरफ 4.50 करोड़ किसानों को ऋण माफी योजना में शामिल कर उन्हें राहत प्रदान की गई है। हाल ही में एक स्वयंसेवी संगठन की ओर से किए गए सर्वे में यह बात सामने आई है कि ऋण माफी की घोषणा के बाद किसानों ने राहत की सांस ली है। किसान खुले मन से इस बात को स्वीकार कर रहे हैं कि वे खेती छोड़ने के लिए विवश थे, लेकिन सरकार ने उन्हें रोक लिया है। हालांकि संस्था को कई स्थानों पर इस बात की भी शिकायत मिली है कि ऋण माफी के नाम पर कुछ वित्तीय संस्थानों ने किसानों को चपत लगाने की कोशिश की। लेकिन यह संख्या बहुत कम है।

यूं आया किसान क्रेडिट कार्ड : दरअसल सरकार की ओर से तमाम तरह की योजनाएं चलाए जाने के बाद भी सूदखोरों का जाल टूट नहीं रहा था। क्योंकि किसानों को कई चरणों में पैसे की जरूरत पड़ती है। कभी बीज के लिए तो कभी खाद के लिए। ऐसे में वे अपनी पूरी उपज बेचने के बाद भी सूदखोर का ब्याज नहीं

चुका पाते। इस समस्या को देखते हुए सरकार ने सर्वे कराया। सर्वे में यह बात सामने आई कि यदि ऐसी व्यवस्था की जाए, जिससे किसानों को फसलवार पैसा मिल सके। फिर क्या था। सरकार ने 1998–99 में किसान क्रेडिट कार्ड देने की घोषणा की। इसकी जिम्मेदारी संभाली आरबीआई और नाबार्ड ने। मार्च 2001 में जहां 13,23,33,97 कार्ड जारी हुए वहीं वर्ष 2008–2009 में 2 लाख 80 हजार करोड़ किसानों को कार्ड मुहैया कराया गया। इस योजना में किसानों को उसकी जोत के आधार पर ऋण उपलब्ध कराया जा रहा है। उन्हें जितने रुपये की जरूरत है, उतना रुपया बैंक से आसानी से मिल रहा है।

किसान क्रेडिट कार्ड एक नजर में

किसान क्रेडिट कार्ड भारतीय रिजर्व बैंक और नाबार्ड के संयुक्त पहल पर तैयार किया गया। इसे वर्ष 1998–99 में लागू किया गया। इसके जरिए किसानों के लिए महत्वाकांक्षी योजना तैयार की गई। किसान क्रेडिट कार्ड योजना का उद्देश्य बैंकिंग व्यवस्था से किसानों को समुचित और यथासमय सरल एवं आसान तरीके से आर्थिक सहायता दिलाना है ताकि खेती एवं जरूरी उपकरणों की खरीद के लिए उनकी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। इस योजना के जरिए किसान सरल प्रक्रिया के तहत आसानी से अपनी जरूरतों को पूरा कर सकते हैं। इस योजना के लागू होने के बाद किसानों को फसलों के लिए अलग–अलग आवदेन करने की प्रक्रिया के झंझट से भी मुक्ति मिल गई है। अब एक बार जोत बही के आधार पर तैयार किए गए कार्ड से वे आसानी से अपनी जरूरतों को पूरा कर रहे हैं। नज़दीकी सार्वज़निक क्षेत्र के बैंक से सम्पर्क कर ज़ानकारी हासिल कर सकते हैं। इस योजना का लाभ लेने के लिए किसानों को ज्यादा भागदौड़ की भी जरूरत नहीं है। वे अपने इलाके में स्थित बैंक में जाएं और आवेदन कर दें। किसानों को पासबुक दी जाती है। इसमें पासबुक पर किसान का नाम व पता, भूमि ज़ोत का विवरण, उधार सीमा, वैधता अवधि, एक पासपोर्ट आकार का फोटो लगाया जाता है जो पहचान पत्र का भी काम करता है। खाते का उपयोग करते समय किसान को अपना कार्ड–सह–पासबुक दिखाना होता है। इस योजना में ऋण सीमा के अनुरूप जो किसान 10 हजार तक ऋण लेते हैं उन्हें मार्जिन नहीं दिया जाता है, लेकिन जो किसान 25 हजार से अधिक ऋण लेते हैं उनके लिए 15 से 25 फीसदी तक मार्जिन मनी का भी प्रावधान किया गया है। इस योजना के तहत किसान खरीफ एवं रबी सीजन में 50 हजार तक का ऋण ले सकता है।

योजना का उद्देश्य

- किसानों के लिए किसी भी समय ऋण की उपलब्धता सुनिश्चित करना।
- किसानों के लिए ब्याज़ के बोझ को घटाना।
- किसानों की सुविधा और विकल्प के अनुसार खाद और उर्वरक की खरीद करना।
- डीलर से नकद खरीद पर छूट दिलाना।
- 3 वर्षों तक ऋण की सुविधा– हर मौसम में मूल्यांकन की आवश्यकता नहीं।

- कृषि आय के आधार पर अधिकतम ऋण सीमा को बढ़ाना।
- ऋण सीमा के भीतर कई बार राशि का निकालना संभव।
- फसल कटाई के बाद अदायगी का प्रावधान।
- कृषि अग्रिम के अनुसार ब्याज़ दर लागू।

किसान क्रेडिट कार्ड प्रदान करने वाले प्रमुख बैंक

इलाहाबाद बैंक– किसान क्रेडिट कार्ड
आंध्रा बैंक– ए.बी. किसान ग्रीन कार्ड
बैंक ऑफ बड़ौदा– बी. किसान क्रेडिट कार्ड
बैंक ऑफ इंडिया– किसान समाधान कार्ड
केनरा बैंक– किसान क्रेडिट कार्ड
कॉर्पोरेशन बैंक– किसान क्रेडिट कार्ड
देना बैंक– किसान गोल्ड क्रेडिट कार्ड
ओरिएंटल बैंक ऑफ कॉमर्स– ओरिएंटल ग्रीन कार्ड (ओ.जी.सी)
पंज़ाब नेशनल बैंक– पी.एन.बी. कृषि कार्ड
स्टेट बैंक ऑफ हैदराबाद– किसान क्रेडिट कार्ड
स्टेट बैंक ऑफ इंडिया– किसान क्रेडिट कार्ड
सिंडिकेट बैंक– सिंडिकेट किसान क्रेडिट कार्ड
विजया बैंक– विजया किसान क्रेडिट कार्ड

किसानों की राय : किसान क्रेडिट कार्ड मिलने के बाद किसानों की माली हालत में काफी सुधार हुआ है। किसानों का कहना है कि जब से वे किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त किए हैं अब पैसे के अभाव में ऐन वक्त पर उनकी खेती नष्ट नहीं हो पाती है। खाद की जरूरत पर खाद मिल जाती है और पानी की जरूरत होने पर पानी। शीतलगंज के किसान श्यामा सिंह का कहा है कि उनके पास मात्र पांच बीघा जमीन है। बुवाई के वक्त बीज खरीदने के लिए कर्जा लेना पड़ता था और खाद का छिड़काव हो ही नहीं पाता था। ऐसे में उत्पादन तो प्रभावित होता ही था। जो भी उपज तैयार होती थी वह कर्ज देने भर की ही होती थी। अब किसान क्रेडिट कार्ड मिल गया है, ताव से खेती होती है। जब जितने पैसे की जरूरत पड़ती, सीधे बैंक जाते हैं और फसल को खाद के वक्त खाद और पानी के वक्त पानी मिलता है। बीज भी नई क्वालिटी का बोते

हैं। इससे उतने ही खेत में खाने के अलावा काफी अनाज बेचते भी हैं। अब उनकी परिवार की आर्थिक स्थिति में काफी सुधार आया है। अभी तक तो वे खेती को घाटे का सौदा समझकर किसी दूसरे के यहां मेहनत मजदूरी करने की सोच रहे थे। बदौरा के किसान रामलाल भी कुछ ऐसा ही कहते हैं। रामलाल का कहना है कि वे खेती छोड़ने की स्थिति में पहुंच गए थे। क्योंकि उनके पास मात्र तीन बीघा खेत था। ऊपर से कर्जा लद गया था। गांव के साहूकार ब्याज इस कदर जोड़ते थे कि मूल धन खत्म होने का नाम ही नहीं ले रहा था। अब किसान क्रेडिट कार्ड मिलने के बाद वह बैंक से जो भी पैसा लेता है, उससे आसानी से काम चल जाता है। नए बीज की बुवाई करने से पैदावार भी अच्छी हो रही है। बैंक का पैसा भी अदा हो जाता है और खाने भर का अनाज भी परिवार को मिल जाता है।

इसी तरह मोकलपुर के किसान रंजय का कहना है कि किसान क्रेडिट कार्ड मिलने के बाद खेती के साथ ही उनके परिवार का रहन–सहन भी बदल गया है। मेरे पास 10 बीघा खेत है। लेकिन पैसे के अभाव में न तो अच्छी किस्म का बीज खरीद पाता था और न ही खाद पड़ती थी। कुछ दिन पहले आलू बोने के लिए गांव के ही एक साहूकार से 10 हजार रुपये ले लिए। दस हजार के एवज में 25 हजार रुपये अदा किए। फिर तो खेती से तौबा करने की सोची। और दिल्ली जाने का मन बना रहा था। लेकिन पारिवारिक कारणों से रूक गया। इसी दौरान ग्राम सेवक ने बताया कि किसान क्रेडिट कार्ड बन रहा है। बैंक गया और बैंक मैनेजर ने जोत बही मांगी। दूसरे ही दिन पासबुक मिल गई और मैनेजर ने कहा जब पैसे की जरूरत हो, बैंक से ले लिया करो। अब मैं किसान क्रेडिट कार्ड से पैसा लेकर आलू, गेहूं के साथ ही गुलाब के फूलों की खेती करवा रहा हूं। तैयार फूल बनारस चले जाते हैं और लागत से काफी अच्छा पैसा मिल रहा है। खेती से हर वर्ष दो–ढाई लाख रुपये की आमदनी हो रही है। हां, इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि बैंक से लिया गया पैसा समय से अदा कर दें। क्योंकि समय से पैसा अदा न होने की स्थिति में ब्याज बढ़ता जाता है और दोबारा पैसा लेने में भी दिक्कत आती है।

महेवां के किसान राम सामुझ यादव का कहना है कि किसान क्रेडिट कार्ड से ऋण लेने के साथ ही उसकी अदायगी का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। क्योंकि बैंक का यही पैसा आपस में एक–दूसरे के पास घूमता रहता है। ऋण लेने के बाद उसे समय से अदा करने की जिम्मेदारी निभानी चाहिए। बैंक मैनेजर के बताने पर हमने गांव में स्थित स्टेट बैंक से किसान क्रेडिट कार्ड बनवा लिया है। बैंक से पैसा आराम से मिल जाता है। अब न किसी की चिरौरी करने की जरूरत है और न ही कोई दूसरा झंझट। बस बैंक गए, पैसे निकाले और मनपसंद दुकान से खाद, बीज खरीदा। पहले खाद–बीज दुकानदार से उधारी पर लेना पड़ता था। ऐसे में नकली होने की शंका होने के बाद भी उसे खेत में डालना विवशता थी। लेकिन अब यह समस्या खत्म हो गई है। बस एक बात का ध्यान रखता हूं कि पैसे का इंतजाम होते ही बैंक को उसका पैसा ब्याज सहित लौटा देता हूं।

(लेखक कृषि मामलों के जानकार हैं।)
ई–मेल : dr.shambhunath@gmail.com

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

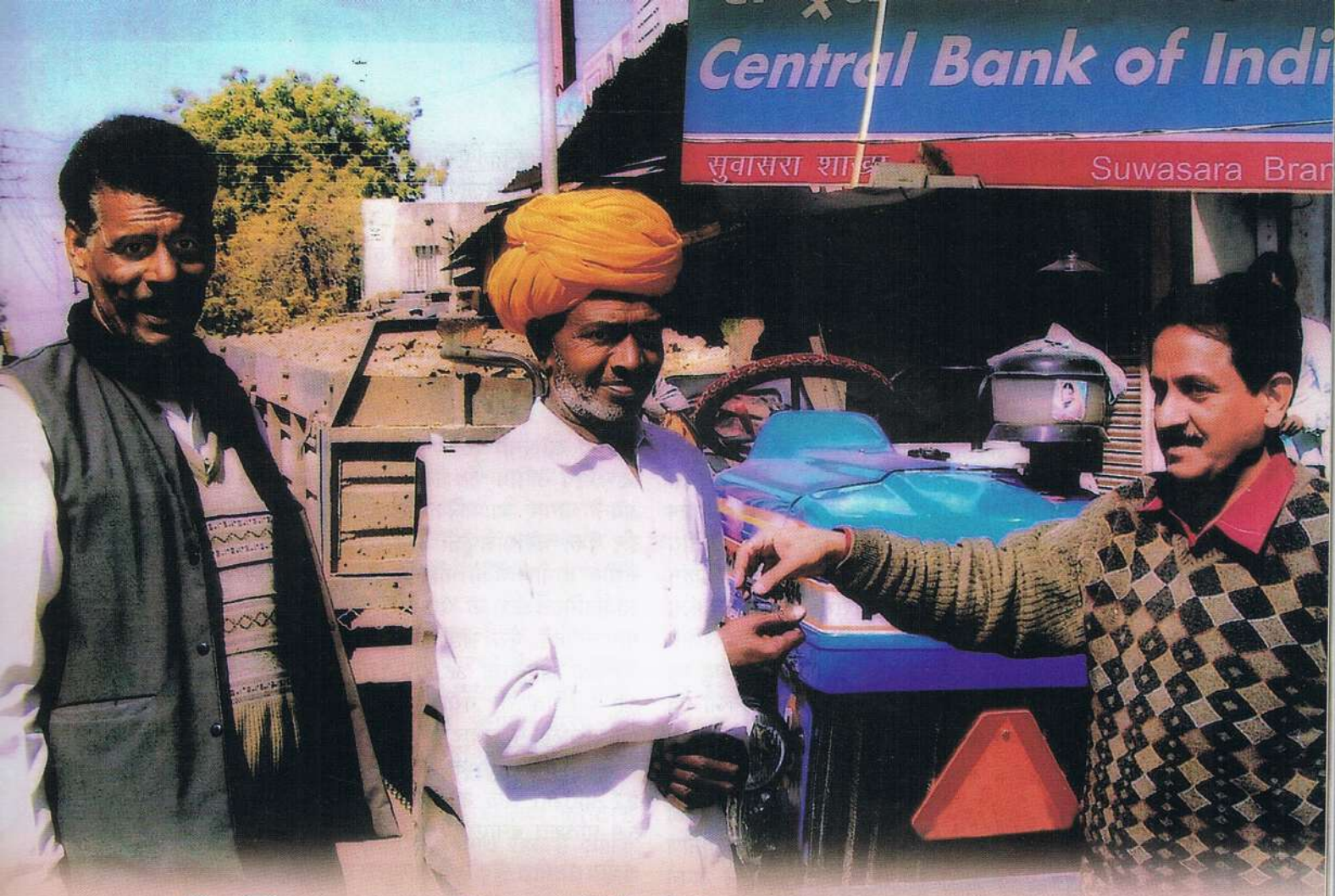

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की प्रासंगिकता

डॉ. नरेन्द्र पाल सिंह एवं डॉ. लोकेन्द्र सिंह

प्राचीनकाल में ऋण देने का काम साहूकारों, सूदखोरों तथा महाजनों तक सीमित था और उनसे ऋण लेने वाला ग्रामीण ताउम्र बंधुआ मजदूर बन जाता था। यह प्रथा अब लगभग समाप्त हो गई है। सरकार तथा बैंकों के हस्तक्षेप से आज ग्रामीण बैंकिंग का परिदृश्य बदल गया है। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई ताकि ग्रामीण एवं कमजोर वर्गों के लोगों को ऋण सुविधाएं कम लागत पर उपलब्ध हो सकें। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, ग्रामीण विकास की उन सभी योजनाओं के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं, जिन्हें सरकार द्वारा प्रभावी रूप से लागू किया जाता है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की आवश्यकता इसलिए महसूस की गयी थी कि सहकारी एवं वाणिज्यिक बैंक ग्रामीण क्षेत्र की ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने में स्वयं को सक्षम महसूस नहीं कर रहे थे और ऋण प्रबन्धन, पर्यवेक्षण एवं वसूली के मामलों में सहकारी ऋण व्यवस्था कमजोर साबित हो रही थी तथा पुनर्वित्त सुविधा के लिए भारतीय रिजर्व बैंक पर निर्भरता बढ़ गयी थी। जहां तक वाणिज्यिक बैंकों का प्रश्न है, ये बैंक मुख्यतः नगरोन्मुखी बैंक माने जाते हैं अतः उनको ग्रामीण क्षेत्र में बैंकिंग पर पकड़ बनाने के लिए पहले अपनी पद्धतियों, प्रक्रियाओं तथा प्रशिक्षण व्यवस्था को ग्रामीण वातावरण के अनुरूप ढालने की आवश्यकता थी। वाणिज्यिक बैंकों की लागतें अधिक आने से ये बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में कमजोर वर्गों के लिए नीची ब्याज दरों पर ऋण सुविधा उपलब्ध नहीं करा पाए। अतः ऐसी संस्था की आवश्यकता महसूस की गयी जो इन कमियों से मुक्त हो।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पास सहकारी बैंकों जैसा स्थानीय परिवेश तथा ग्रामीण समस्याओं का परिचय और वाणिज्यिक बैंकों जैसी कारोबारी संगठन की मात्रा तथा जमाराशियां जुटाने की क्षमता दोनों ही हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक विशेषीकृत ग्रामीण वित्तीय संस्थाएं हैं जोकि ग्रामीण क्षेत्रों की जरूरतों को पूरा करती हैं। भारत सरकार के कृषि सम्बन्धी क्षेत्र को ऋण प्रवाह को दुगुना करने के हाल के प्रयासों के सन्दर्भ में यह महसूस किया गया कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के ग्रामीण अनुकूलन के परिप्रेक्ष्य में उनका उपयोग ऋण सुपुर्दगी के एक प्रभावी साधन के रूप में किया जा सकता है। अब क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को बैंकिंग क्षेत्र में उत्पन्न नयी–नयी अवधारणाओं के अनुपालन में अच्छे गवर्नेंस संचालन तथा विवेकपूर्ण विनियमों का अनुपालन करना होगा। ग्रामीण ऋण के प्रबन्धक के रूप में प्रवर्तक बैंक अपने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्यनिष्पादन के प्रति उत्तरदायी होंगे। बैंकिंग सुधारों को लागू हुए लगभग दो दशक का समय पूरा होने वाला है तथा भारतीय बैंकिंग में आए दिन नए–नए परिवर्तन परिलक्षित हो रहे हैं और बैंकिंग क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा भी अपने चरम बिन्दु पर है अतः ऐसे समय में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का सरकारी, निजी एवं विदेशी बैंकों के साथ चलना अनिवार्य हो गया है।

बैंकिंग सुधारों से पूर्व क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

बैंकिंग सुधारों के लागू होने से पहले क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा लगभग 15 वर्ष कार्य किया गया। इस दौरान क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की जमाओं एवं इनके द्वारा खोली गई शाखाओं ने अपने कार्यक्षेत्र में काफी वृद्धि की है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा ग्रामीण विकास हेतु सरकार द्वारा चलाए गए 20 सूत्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्र में अधिकांश ऋण वितरित किए गए। इन बैंकों पर राज्य सरकार, प्रायोजित बैंक और केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण होने के कारण इन सभी का पूर्ण सहयोग नहीं मिल पाया। इन बैंकों में उद्देश्य के अनुरूप ग्रामीण एवं क्षेत्रीय आधार पर बैंककर्मियों की भर्ती नहीं की गई, अतः ये बैंक ग्रामीण एवं जरूरतमंद लोगों को पूर्णतया सन्तुष्ट नहीं कर पाए। साथ ही बैंकों एवं उनकी शाखाओं का विस्तार भी सुनियोजित तरीके से नहीं किया गया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने जिस तीव्रता से सरकार के दबाव में आकर ऋणों को वितरित किया उतनी तीव्रता से बैंकों में वसूली निष्पादकता का कार्य नहीं हो सका और अतिदेय एवं वसूली की समस्या खड़ी हो गयी। सरकार द्वारा समय–समय पर ऋण माफी योजना लागू करने, राजनैतिक हस्तक्षेप, प्रभावी नियन्त्रण में कमी, ऋण प्रक्रिया में खामियां, समय पर वसूलियों का न होना आदि अनेक ऐसे कारण उत्पन्न हो गए जिनकी वजह से इन बैंकों की अधिकांश शाखाएं इन वर्षों में हानि की ओर अग्रसर होती चली गईं।

इन बैंकों द्वारा कृषि, कृषि पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योग, व्यवसाय तथा दस्तकारी हेतु ऋण प्रदान किए गए जबकि इन क्षेत्रों में आय की सम्भावनाएं अनिश्चित होती हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में शाखाएं खोलकर जहां उस क्षेत्र का थोड़ा–सा विकास किया, वहीं पर व्यापारिक एवं निजी बैंकों द्वारा इन बैंकों से प्रतिस्पर्धा शुरू हो गयी और अपनी शाखाएं खोलना शुरू कर दिया। परिणाम यह हुआ कि जनता ने ऋण एवं अग्रिम तो क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से प्राप्त किया जबकि अपनी जमाएं व्यापारिक अथवा निजी बैंकों में जमा की जिससे इन बैंकों की अंशपूंजी और रक्षित निधियां काफी कम हो गयी। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की गैर–निष्पादक आस्तियों की तुलना यदि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से करें तो आज भी इन बैंकों द्वारा मानकों को पूरा नहीं किया जा रहा है। वर्ष 1997 में जहां अनर्जक आस्तियां 36.8 प्रतिशत थीं, वह वर्ष 2008 में घटकर 5.9 प्रतिशत रह गयी हैं। अतः इन बैंकों को अभी भी अपनी कार्यप्रणाली में सुधार की आवश्यकता है। वर्ष 2008 के अन्त में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों की अनर्जक आस्तियां घटकर 2.2 प्रतिशत तक आ गयी हैं जबकि ये बैंक अभी भी यह दर 5.9 प्रतिशत बनाए हुए हैं।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सम्मुख समस्याएं

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को कार्य करते हुए तीन दशक पूरे हो चुके हैं और इन बैंकों ने ग्रामीण क्षेत्रों में समाज के कमजोर वर्गों को ऋण उपलब्ध कराने तथा ग्रामीण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इन बैंकों द्वारा ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में लघु एवं सीमान्त किसानों, कृषि श्रमिकों, दस्तकारों एवं कारीगरों, लघु एवं कुटीर उद्यमियों तथा विकलांगों आदि को ऋण प्रदान करने में कोई कमी नहीं छोड़ी गई है और उनके विकास में भरपूर सहयोग एवं सराहनीय कार्य किया है। इन सबके बावजूद ये बैंक उतनी अच्छी कार्य निष्पादकता प्रदर्शित नहीं कर पाए जितनी कि इनसे आशा की जाती थी। इस सबके पीछे प्रमुख कारण निम्न हैं:

बैंकिंग सुधारों के पश्चात् क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की प्रगति एवं कार्य निष्पादकता

(रुपये करोड़ में)

क्र.सं.	विवरण	1991	1995	2001	2005	2006	2007	2008
1	क्षे0ग्रा0बैंकों की सं0	196	196	196	196	133	96	91
2	शाखाओं की सं0	14527	14509	14313	14501	14449	10563	NA
3	जिलों की संख्या	381	425	484	523	525	357	NA
4	जमा	4989.24	11150.01	38271.89	62143	71329	83144	99095
5	अनर्जक आस्तियां	3609.27	6290.97	15861.30	N.A.	N.A.	NA	NA
6	लाभ वाले क्षे.ग्रा.बैंक	44	32	170	166	111	81	82
7	हानि वाले क्षे.ग्रा.बैंक	152	164	26	30	22	15	8
8	सकल वा0लाभ/हानि	–72.58	–394.25	601.00	748.00	617	625	1374

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में आपसी समन्वय की समस्या प्रमुख है क्योंकि बहुत से ग्रामीण बैंक उन स्थानों पर स्थापित नहीं किए गए जैसा कि मूलतः उनकी स्थापना के समय स्थान के बारे में कल्पना की गयी थी।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा पूर्णतः विकास करने हेतु अभी भी पूर्ण शाखा नेटवर्क नहीं बनाया गया है ताकि सभी शाखाएं आपसी नेटवर्क से जुड़ सकें। अतः आज भी इन बैंकों की शाखाओं की संख्या कम है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में आज भी प्रशिक्षित कर्मचारियों एवं अधिकारियों का अभाव है जो बैंकों की नीतियों को ग्रामीण परिवेश के अनुसार मोड़ कर सफलता हासिल कर सके।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का पूंजी आधार आज भी कमजोर है। जो बैंक घाटे में चल रहे हैं, उनका तो पूंजी आधार और भी कम हो गया है। अतः ग्रामीण क्षेत्रों में विशाल ऋण की आवश्यकताओं को ये बैंक पूरा नहीं कर पा रहे हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में देय ऋणों की वसूली भी पर्याप्त रूप से नहीं हो पा रही है जिनके प्रमुख कारणो में जानबूझकर चूक, ऋणों का दुरूपयोग, अनुवर्ती कार्यवाही की कमी, ऋण प्राप्तकर्ताओं की गलत पहचान, बेनामी ऋणों का विस्तार, स्टाफ सम्बन्धी आन्दोलन तथा सरकारी नीतियां आदि शामिल हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण उपलब्ध कराते हैं इसलिए वे पर्याप्त जमाराशि जुटाने में असमर्थ रहते हैं क्योंकि ये बैंक असाधारण गरीब, पिछड़े एवं दूरदराज के क्षेत्रों में खोले गये हैं अतः वहां के लोगों के पास जमा करने के लिए अतिरिक्त धन होता ही नहीं और यदि थोड़ा–बहुत धन होता है तो सरकारें लघु बचत आन्दोलन चलाकर अपनी ओर खींच लेती हैं जिससे इन बैंकों का कार्य प्रभावित होता है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का घाटे में चलने का प्रमुख कारण यह भी है कि ये बैंक अधिकांश कमजोर वर्गों को ऋण देते हैं। ऋण की ब्याज दर का कम होना तथा छोटे–छोटे ऋणों के रखरखाव पर होने वाली उच्च परिचालन लागत इन बैंकों को घाटे की ओर अग्रसित कर देती है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सम्मुख लाभार्थियों के चयन के लिए अखिल भारतीय स्तर पर कठोर मानक बनाए गए हैं जबकि प्रत्येक क्षेत्र में आय स्तर, ऋण की आवश्यकताएं, परिस्थितियां, कृषि एवं औद्योगिक स्थिति भिन्न–भिन्न हैं। अतः कुछ क्षेत्रों में इन मानकों को पूरा करना काफी मुश्किल हो जाता है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र में ऋण की व्यवस्था करने के पीछे सरकार की मूल भावना यह होती है कि गांव के कमजोर लोगों को ऋण मुहैया कराया जाए। अतः बैंकों के सम्मुख यह समस्या उत्पन्न हो जाती है कि कुछ अनुत्पादक ऋण भी स्वीकृत हो जाते हैं जिसकी वसूली बैंकों के लिए एक कठिन कार्य बन जाती है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर बहुत–सी सीमाएं लगायी गई हैं जिससे वह ग्राहकों को वाणिज्यिक बैंकों की भांति सम्पूर्ण सेवाएं उपलब्ध नहीं करा पाते। परिणामस्वरूप उनकी आय कमाने की क्षमता गिर जाती है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना के समय इनके बैंककर्मियों को राज्य स्तरीय वेतनमान स्वीकृत किये गये थे जबकि इनमें आज वृद्धि होकर वाणिज्यिक बैंकों के लगभग बराबर हो गए हैं। अतः क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना का महत्वपूर्ण तार्किक आधार समाप्त हो गया है और परिचालन लागतों में अप्रत्याशित वृद्धि हो गयी है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के प्रवर्तक बैंक स्वयं ही अपनी ग्रामीण शाखाएं इन बैंकों के क्षेत्र में खोल देते हैं। इसलिए इन बैंकों के सम्मुख अनावश्यक प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हो जाती है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की अनर्जक आस्तियों का प्रतिशत अन्य बैंकों की तुलना में आज भी काफी ऊंचा है क्योंकि ये बैंक ऋण प्रदान करते समय प्रतिभूति एवं जमानत पर अधिक बल नहीं देते।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा अपने प्रायोजक बैंक के पास जो राशि जमा की जाती है, उस पर इन्हें कम दर पर ब्याज दिया जाता है जबकि प्रायोजक बैंक उस धन को खुले बाजार में लगाकर अधिक ब्याज प्राप्त करने में सफल हो जाते हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा अपने क्षेत्र की जमाओं को प्राप्त करने हेतु अन्य बैंकों की तुलना में अधिक ब्याज देना पड़ता है जिससे इन बैंकों पर ब्याज का अतिरिक्त बोझ पड़ता है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु ऋण एवं वसूली हेतु एक नियत समय अन्तराल पर ऋण मेलों का आयोजन किया जाता है जिसमें समय अभाव के कारण लाभार्थियों एवं योजनाओं का सही चयन नहीं हो पाता और गुणवत्ताहीन ऋण वितरित हो जाते हैं जिससे उनकी वसूली भी ठीक समय पर नहीं हो पाती है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में भर्ती के समय ग्रामीण अंचलों के निवासियों की नियुक्ति पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता परिणामस्वरूप शहरी कर्मचारी नियुक्त हो जाते हैं जो ग्रामीण समस्याओं एवं वातावरण से अनभिज्ञ रहते हैं और अधिकांश स्टाफ प्रतिदिन शहरी क्षेत्रों से ही आना–जाना करता है। साथ ही उन्हें पूर्ण रूप से प्रशिक्षण भी नहीं दिया जाता जिससे बैंक की कार्यप्रणाली निश्चित रूप से प्रभावित होती है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के निर्णय जैसे नई शाखा खोलने हेतु स्थान का चयन, मानव शक्ति नियोजन, योग्य अधिकारियों एवं कर्मचारियों की भर्ती, कोषों का प्रबन्ध, आदि प्रायोजक बैंक अथवा सरकारी अधिकारियों के द्वारा लिए जाते हैं। परिणामस्वरूप ये बैंक लगातार अपनी समस्याओं को झेलते रहते हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में बैंकिंग सुधारों के चलते अधिकांश शाखाओं में कम्प्यूटरीकरण की सुविधा लागू की गई है और अधिकांश ग्रामीण शाखाओं में दो अथवा तीन बैंककर्मी नियुक्त किए गए हैं। अतः शाखा में कार्य की अधिकता के

परिणामस्वरूप ये कर्मी ऋण स्वीकृत कर उसकी वसूली अथवा नयी–नयी योजनाओं को समय से क्रियान्वित नहीं कर पाते।

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कार्यप्रणाली आज भी परम्परागत आधार पर चल रही है जबकि बैंकों में आए दिन नयी–नयी अवधारणाएं पैदा हो रही हैं जोकि इन बैंकों द्वारा अभी अछूती हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में बैंक स्टाफ ग्रामीणों के प्रति ऋणात्मक दृष्टिकोण अपनाता है। अतः बैंक स्टाफ इन शाखाओं में ग्रामीणों के प्रति अनुशासनहीनता जैसे बीच–बीच में काउन्टर छोड़ना, आपसी व्यर्थ की बातचीत में व्यस्त होना, ग्राहकों पर ध्यान न देना आदि बातें व्याप्त हो जाती है और ग्रामीण ग्राहकों को सही ग्राहक सेवा उपलब्ध नहीं हो पाती।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों मे आज भी ग्रामीण ग्राहक, जो कम पढ़े–लिखे अथवा निरक्षर होते हैं, के लिए नए खाता खोलने, बैंक ड्राफ्ट जारी करने, चैकों के निपटान तथा ऋण स्वीकृत करने में विलम्ब करते हैं तथा अनावश्यक शर्तें थोपते हैं एवं ग्राहकों द्वारा जानकारी प्राप्त करने हेतु भेजे गये पत्रों का भी समय से जवाब नहीं देते हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के स्टाफ को बैंकिंग से सम्बन्धित नवीनतम जानकारी का अभाव रहता है और वे ग्राहकों को भी आधी–अधूरी सूचनाएं देकर उनका नुकसान करते हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं में मुख्य कार्यालय अथवा सरकार द्वारा निर्धारित कार्य समय का नियमित रूप से पालन नहीं किया जाता। ग्रामीणों से छोटे मूल्य वर्ग के नोटों को बिना पर्याप्त कारण बताए अस्वीकृत कर दिया जाता है तथा ग्राहकों के लिए इन बैंकों द्वारा गारन्टी करने से भी मना कर दिया जाता है।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में ग्राहकों द्वारा जमा बाहरी चैकों के लिए प्राप्त धन को भी समय से उनके खाते में जमा नहीं किया जाता और ग्राहकों के खातो से अनाधिकृत एवं कपटपूर्ण धन आहरित करने की घटनायें भी अक्सर देखने को मिलती हैं।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में ग्राहकों की समस्या के निवारण हेतु निर्धारित समय पर ग्राहक गोष्ठी का आयोजन नहीं किया जाता और कागजी खानापूरी कर दी जाती है। अधिकांश क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की शाखाओं के परिसर में ग्राहकों के बैठने, पीने के पानी तथा आधारभूत सुविधाओं का अभाव देखने को मिलता है।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सम्मुख चुनौती

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने आर्थिक सुधारोपरान्त अपनी कार्यशैली में काफी बदलाव एवं सुधार किया है। उदारीकरण एवं निजीकरण की अवधारणा के आने से इन बैंकों को सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंकों से प्रतिस्पर्धा करनी पड़ रही है जबकि इन बैंकों को अपने कार्य एवं सेवाओं में पूर्णतः छूट प्राप्त नहीं है। शाखाओं में पर्याप्त स्टाफ का अभाव है। सूचना प्रौद्योगिकी एवं इलैक्ट्रानिक बैंकिंग की अवधारणा भी इन बैंकों में पूर्णतः लागू नहीं की गयी है। सभी शाखाएं बैंकिंग नेटवर्क के साथ अभी भी नहीं जुड़ पायी हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक अपना कार्य बखूबी निभा रहे हैं किन्तु इन बैंकों के सामने अभी भी बहुत–सी चुनौतियां मुंह बाएं खड़ी हैं जिनमें से प्रमुख निम्न हैं:

- बैंक शाखाओं में समुचित एवं पर्याप्त ग्राहक सेवाओं का अभाव।
- गैर–निष्पादक आस्तियों के मानक को प्राप्त न कर पाना और उसमें अपर्याप्त कमी।
- पूंजी पर्याप्तता के निर्धारित मानकों को प्राप्त न कर पाना।
- ब्याज दरों में अनिश्चितता एवं उसमें लगातार होता उच्चावचय।
- अधिकतर बैंक शाखाओं का कारोबार ग्रामीण पिछड़े एवं दूरदराज के क्षेत्रों में स्थित होना।
- बैंकों के कार्य एवं नीतियों में बढ़ता राजनैतिक हस्तक्षेप।
- बैंकों के सम्मुख उत्पन्न नई–नई जोखिमें, परिणामस्वरूप लाभदायकता में कमी।
- इन बैंकों के कार्यक्षेत्र में गैर–ब्याज आय वाले कार्यों को प्रोत्साहन की आवश्यकता।
- इन बैंकों को और अधिक स्वायतत्ता एवं स्वनिर्णय प्रदान करने की आवश्यकता।
- ग्रामीण क्षेत्रों हेतु सरकार द्वारा लागू विभिन्न योजनाओं को सीधे इन बैंकों के माध्यम से लागू करना।
- इन बैंकों की कार्यप्रणाली पर सरकार द्वारा लगाए गए विभिन्न प्रतिबन्धों में छूट देने की आवश्यकता।
- इन बैंकों की ग्रामीण शाखाओं के अन्तर्गत आधारभूत सुविधाओं में वृद्धि करना।
- इन बैंकों में अन्य बैंकों की भांति नयी सूचना प्रौद्योगिकी एवं तकनीकी को समयानुरूप लागू करना।

इन बैंकों की शाखाओं में कार्यरत अधिकारियों एवं कर्मचारियों की उत्पादकता के घटते स्तर को देखते हुए उन्हें प्रशिक्षित करने की आवश्यकता।

- विकास के साथ–साथ इन बैंकों की सार्वजनिक, निजी एवं विदेशी बैंकों से प्रतिस्पर्धा।
- इन बैंकों के बैंककर्मियों द्वारा समय–समय पर की गई विभिन्न मांगें।
- इन बैंकों द्वारा अपनी लाभप्रदता को बढ़ाने हेतु लागत प्रणाली पर नियन्त्रण की आवश्यकता।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कार्यप्रणाली में सुधार हेतु सुझाव

देश के ग्रामीण क्षेत्रों में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, कृषि एवं लघु व कुटीर उद्योगों के विकास के लिए ऋण प्रदान कर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को भी देश की बैंकिंग व्यवस्था के साथ चलकर अपने यहां आधुनिकीकरण, मशीनीकरण एवं इलैक्ट्रॉनिक बैंकिंग की अवधारणा को समय रहते लागू करना

चाहिए और अतिरिक्त हुए मानव संसाधन का प्रयोग, अतिरिक्त शाखाओं का विस्तार एवं ऋण वसूली हेतु किया जाना चाहिए। इन बैंकों को चाहिए कि समय–समय पर प्रत्येक कर्मचारी को प्रभावशाली प्रशिक्षण प्रदान कर, कार्य के प्रति अभिप्रेरित किया जाए। कार्य की उत्कृष्टता के आधार पर इनको पदोन्नति, स्थानान्तरण एवं कार्य की तैनाती सुनिश्चित की जाए तथा साथ ही बैंक के लक्ष्यों के प्रति जागरूक बनाया जाए। ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण प्राप्तकर्ताओं के मन में यह बात बैठा दी जानी चाहिए एवं ऐसी भावना जागृत करनी चाहिए कि बैंक द्वारा प्रदत्त ऋण को चुकाना उनका पहला कर्तव्य एवं जिम्मेदारी है। प्राप्त ऋण को उद्देश्य के अनुरूप ही प्रयोग किया जाए और उसको अन्य कार्यों में कदापि प्रयोग न किया जाए। समय पर ऋण चुकाने वाले ग्राहकों को प्रोत्साहित किया जाए और उन्हें यह समझाया जाए कि समय पर ऋण चुकाने से समाज और बैंक के समक्ष उनकी छवि अच्छी बनती है। बैंक से प्राप्त ऋण राशि से खरीदी गई सम्पत्ति का यदि नुकसान होता है तो बीमा कम्पनी से प्राप्त क्षतिपूर्ति का लाभ बैंकों को भी दिलाया जाए।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा ग्राहकों को काउन्टर पर दी जाने वाली सेवाओं में भी अपेक्षित सुधार करना होगा। शाखा परिसर में ग्राहकों के बैठने, हवा एवं पानी की व्यवस्था, ग्राहक गोष्ठी हेतु उचित स्थान, कर्मचारियों द्वारा ग्राहकों का सम्मान, पर्याप्त मात्रा में पुर्जी, फार्म एवं स्टेशनरी की उपलब्धता तथा कार्य निष्पादन में तेजी आदि बातें सम्मिलित की जानी चाहिए। ग्राहकों की शिकायतों का निवारण अविलम्ब किया जाए। इन बैंकों को अपनी शाखा स्तर पर कार्य निष्पादन में वृद्धि हेतु नवीनतम सूचना प्रौद्योगिकी का प्रयोग करना होगा क्योंकि आज का ग्रामीण ग्राहक भी बैंक से यह उम्मीद रखने लगा है कि वह देश के किसी भी शहर में अपने धन का आहरण, निवेश तथा बिलों का भुगतान न्यूनतम जोखिमों के साथ कर सके। इन बैंकों में नवीनतम अवधारणा जैसे इलैक्ट्रॉनिक बैंकिंग, एटीएम, इंटरनेट बैंकिंग, रियल टाइम ग्रॉस सैटलमेंट, इलैक्ट्रॉनिक क्लियरिंग सेवाएं आदि को लागू करने से पहले आधारभूत ढांचे को धीरे–धीरे विकसित करना होगा। जहां बैंकों में स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति योजना लागू की जा रही है वहीं पर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की शाखाओं में स्टाफ की समस्या है क्योंकि कोई भी ग्रामीण ग्राहक बैंक के काउन्टर पर बैठे कर्मचारी को ही बैंक के प्रतिबिम्ब के रूप में देखता है। अतः बैंक के अधिकारियों एवं कर्मचारियों को निर्धारित योग्यता के आधार पर ही भर्ती एवं नियुक्ति दी जाए।

आज के युग में ग्राहक बैंकों के पुराने एवं पारम्परिक उत्पादों एवं सेवाओं तक ही सीमित नहीं रहना चाहता बल्कि वह चाहता है कि कम से कम लागत एवं समय में अधिक से अधिक सेवा प्राप्त हो सके। अतः इसके लिए इन बैंकों को कुछ दूसरी संस्थाओं के साथ सम्बद्धता एवं सम्पर्क स्थापित कर जैसे बीमा कम्पनी, म्यूचुअल फंड, डिपोजिटरी सेवाएं आदि के उत्पाद बेचकर भी अपने ग्राहकों को बनाये रखें। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को चाहिए कि अपनी जोखिमों में कमी करने हेतु ऋणों की अनेक योजनाओं एवं उत्पादों के जरिए जैसे आवास ऋण, कृषि ऋण, स्वयं–सहायता समूह को ऋण, डेबिट, क्रेडिट कार्ड, सरकार द्वारा लागू विभिन्न योजनाओं के अन्तर्गत ऋण प्रदान करे जिससे वसूली की सम्भावनाएं भी प्रबल रहेंगी। इन बैंकों को आपसी प्रतिस्पर्धा में बने रहने के लिए बाजार के विभिन्न हिस्सों की वर्तमान दशा एवं सम्भावनाओं का पता लगाना होगा तथा कम रूझान वाले एवं अनछुए बाजार क्षेत्रों की ओर निरन्तर अपने प्रयासों को तेज करना होगा। तकनीकी आधारित स्पर्धा को भी इन बैंकों द्वारा अपने यहां लागू करना होगा किन्तु इस स्पर्धा में यह ध्यान रखना होगा कि कहीं बैंक की लागतें इतनी न बढ़ जाएं कि बजाय लाभ के हानि ही उठानी पड़े। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को स्थान आधारित स्पर्धा को भी झेलना पड़ता है क्योंकि पिछड़े क्षेत्रों में थोड़ा–सा विकास होते ही अन्य बैंक इनकी प्रतिस्पर्धा में आ जाते हैं। उदारीकरण एवं निजीकरण के अन्तर्गत सरकार एवं रिजर्व बैंक द्वारा नियमों में ढील दिए जाने से लाभ आधारित स्पर्धा उत्पन्न हो गयी है जिससे जमाकर्ताओं और ऋणियों में सौदेबाजी की गुंजाइश अधिक हो गयी है।

भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आज के दौर में बहुत अधिक प्रासंगिक दिखायी पड़ते हैं क्योंकि हमारी अर्थव्यवस्था का ढांचा एवं स्वरूप ही ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर आधारित है। इन बैंकों को आने वाले समय में सफलता प्राप्त करने के लिए निश्चित रूप से अपनी कार्यप्रणाली में परिवर्तन लाना होगा जबकि अन्य बैंकों की भांति इन बैंकों को भी स्वतन्त्र निर्णय की छूट प्रदान की जानी चाहिए। इन बैंकों के मानव संसाधन विकास को भी उन्नत करना होगा क्योंकि ये बैंक भी हमारी बैंकिंग व्यवस्था के स्थायी स्तम्भ हैं। आज वाणिज्यिक बैंक भी शहरों में अपने कारोबार की ऊंचाइयों को छूकर ग्रामीण एवं खुदरा बाजार को तलाश कर रहे हैं जिससे इन बैंकों के साथ प्रतिस्पर्धा और अधिक होने की सम्भावना है। अतः क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का अपनी क्षेत्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन करना अनिवार्य हो जाएगा। इससे द्वितीय पीढ़ी के सुधारों में तो प्रतियोगिता का माहौल और भी कड़ा होने की उम्मीद है। अतः बाजार में केवल वही बैंक टिक पाएगा जो त्वरित गति से निर्णय लेगा तथा अपने ग्राहकों को उत्कृष्ट सेवाएं एवं उत्पाद कम लागत पर उपलब्ध कराएगा। अतः इन सब बातों को ध्यान में रखकर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को भी अपनी कार्यप्रणाली में आमूल–चूल परिवर्तन करने होंगे तथा स्वयं को एक लाभप्रद संस्था के रूप में स्थापित करना होगा तभी यह बैंक प्रतिस्पर्धा को झेलकर अपनी सफलता सुनिश्चित कर पाएंगे।

(लेखक साहू जैन कालेज, नजीबाबाद के वाणिज्य संकाय में रीडर हैं।)
ई–मेल : mr.drnarendra@rediffmail.com

लघु ऋण व्यवस्था के जरिए महिला सशक्तिकरण

डॉ. सुनिता बोहरा

लघुऋण क्या है?

लघुऋण को बहुत छोटी राशि वाले ऋण और वित्तीय सेवाओं तथा उत्पादों के प्रावधान के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसका उद्देश्य ग्रामीण, अर्द्ध–शहरी और शहरी क्षेत्रों के गरीब लोगों का उनकी आय बढ़ाकर उनके जीवन स्तर में सुधार लाना है। इस प्रकार की सुविधाएं प्रदान करने वाली संस्थाओं को लघुऋण संस्थाएं कहते हैं।

स्वयंसहायता समूह क्या है?

स्वयंसहायता समूह एक समान सामाजिक और आर्थिक पृष्ठभूमि वाले छोटे उद्यमियों का एक पंजीकृत अथवा अपंजीकृत समूह होता है। ये उद्यमी नियमित रूप से छोटी धनराशियों की बचत करता है और परस्पर सहमति के आधार पर एक साझा निधि में योगदान करने के साथ ही परस्पर सहायता के आधार पर आकस्मिक जरूरतों की पूर्ति करते हैं। समूह के सदस्य सामूहिक बुद्धि और

दृष्टिकोण से किए प्रयास अधिक समग्र व दीर्घकालीन होते है। लघु ऋण के तहत भी हमें इस नजरिये से काम करना होगा तभी इसे एक प्रभावी रणनीति के तौर पर स्थापित किया जा सकेगा। अतः यदि स्वसहायता समूहों को महिला सशक्तिकरण का वास्तविक माध्यम बनाना है व महिलाओं को इससे लंबे समय के लिए जोड़े रखना है तो इन समूहों में शिक्षा, साक्षरता व क्षमता निर्माण प्रक्रियाओं पर सबसे ज्यादा जोर देना होगा। तभी यह समूह सही मायनों में इससे जुड़ने वाली सभी महिलाओं के सशक्तिकरण और गरीबी उन्मूलन का जरिया बन सकते हैं।

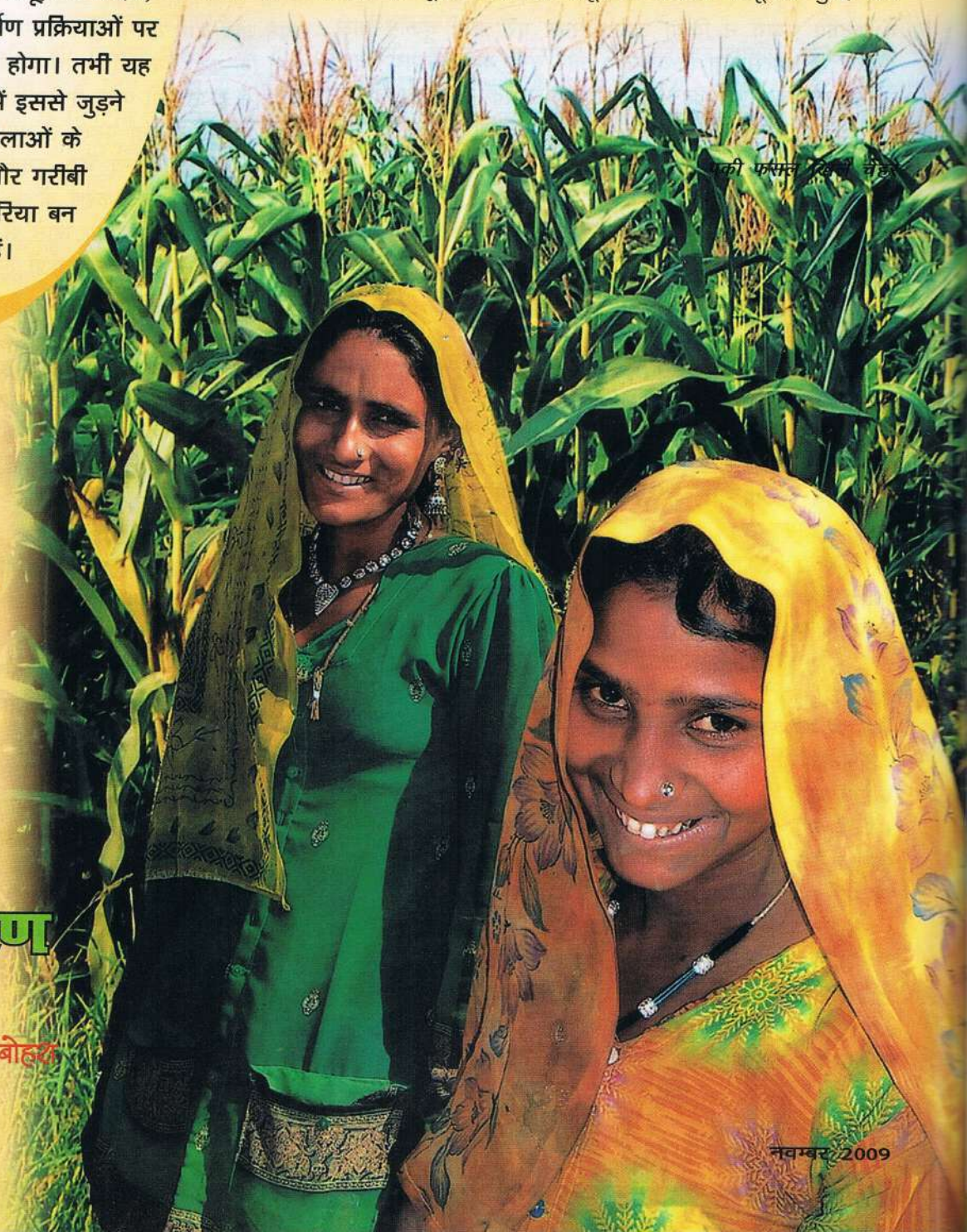

समुचित दबाव का इस्तेमाल करते हैं ताकि ऋण का समुचित उपयोग सुनिश्चित हो और फिर समयानुसार अदायगी हो सके।

महिला सशक्तिकरण

महिला सशक्तिकरण से तात्पर्य किसी भी महिला के आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता व आत्मविश्वास में वृद्धि के साथ–साथ सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक उत्थान से है।

ऋण के जरिए विकास वर्तमान विकास का स्वरूप बन चुका है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विश्व बैंक हो या राष्ट्रीय स्तर पर देश की सरकारें, सभी अब ऋण के जरिए विकास की पैरवी कर रहे हैं। इसी कड़ी में स्थानीय स्तर पर दिए गए छोटे–छोटे ऋणों को लघु ऋण का नाम दिया गया है। लघु ऋण कार्यक्रम सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि अधिकतर विकासशील और गरीब देशों में बड़ी तेजी से अपना दायरा बढ़ा रहे हैं। खासतौर पर जब से ग्रामीण बैंक, बांग्लादेश के संस्थापक नोबेल पुरस्कार विजेता मुहम्मद युनुस ने यह साबित कर दिया कि लघुवित्त ऋण देने वाले और लेने वाले दोनों ही के लिए लाभदायक है तब से न सिर्फ लघुवित्त ऋण संस्थान बल्कि बड़े–बड़े राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय बैंक तथा सरकारें भी बढ़–चढ़कर लघुऋण वितरण कार्य कर रही हैं।

भारत में अधिकतर लघु ऋण कार्यक्रम समूहगत ढांचों के जरिये क्रियान्वित किए जाते हैं, जिन्हें स्वयंसहायता समूह के नाम से जाना जाता है। विभिन्न रिपोर्ट और लेखों के आंकड़ों के अनुसार फिलहाल भारत में कम से कम 70–80 लाख समूह बने हुए हैं, जिनके जरिये कम से कम 7–8 करोड़ परिवारों तक पहुंच बनाने का दावा किया जा रहा है और इनमें से लगभग 92 प्रतिशत स्वयंसहायता समूह सिर्फ महिलाओं के हैं। न सिर्फ भारत में बल्कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भी लघुऋण कार्यक्रमों में भाग लेने वाले सदस्यों में 80–85 प्रतिशत जनसंख्या महिलाओं की है। इतनी बड़ी संख्या में महिलाओं के साथ काम करना कोई घटना मात्र नहीं है, इसके पीछे निश्चित कारण व तर्क हैं। 90 के दशक में संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर किए गए एक सर्वे में पाया गया कि कुल अत्यधिक गरीब जनसंख्या में 60–65 प्रतिशत महिलाएं है। अर्थात् गरीबी का असली चेहरा एक महिला का है। इसके आधार पर गरीबी के मुद्दे पर अधिक से अधिक महिलाओं तक पहुंच बनाने पर जोर दिया गया। लेकिन महिलाओं के साथ जुड़ाव बनाने का सिर्फ यही कारण नहीं। बड़े पैमाने पर अब यह भी सिद्ध हो चुका है कि न सिर्फ महिलाओं द्वारा लिया गया ऋण परिवार व पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इस्तेमाल होता है बल्कि ये पुरुषों की तुलना में कर्ज वापसी में भी अधिक अनुशासित व प्रतिबद्ध होती हैं। जाहिर है इसलिए भी अधिकतर लघु ऋण कार्यक्रम महिला समूहों के साथ ही काम कर रहे हैं। यही कारण है कि अधिकतर स्वयंसहायता समूह लघु ऋण के जरिए सिर्फ गरीबी उन्मूलन ही नहीं बल्कि अन्य व्यापक उद्देश्यों को पाने का दावा भी करते हैं जिनमें एक सामूहिक उद्देश्य है महिला सशक्तिकरण।

केवल राजनीतिक सशक्तिकरण से ही महिलाओं का संपूर्ण सशक्तिकरण नहीं होगा। राजनीतिक सशक्तिकरण की दृष्टि से भारत की महिलाओं का स्थान 128 देशों में 21वां है, लेकिन आर्थिक भागीदारी, शैक्षणिक मामले एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से भारतीय महिलाओं की पूरे विश्व में रैंकिंग क्रमश 122, 116 तथा 126 है। इस तरह महिला सशक्तिकरण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिये उत्पादन और आय अर्जन के क्षेत्र में महिलाओं को आगे आना है।

गांवों में एंटरप्रेन्योरशिप मॉडल उभर रहा है जो महिला सशक्तिकरण में अहम भूमिका निभा रहे हैं– जैसे राजस्थान के चोथवाड़ी गांव (चौमूं), जयपुर के फोर्ड फाउण्डेशन की ओर से इंटरनेशनल फैलोशिप प्रोग्राम के तहत फिलीपींस से विकास प्रबंधन में स्नातकोत्तर डिग्री कर रहे दीपक योगी अपने ही गांव में श्री श्याम संस्कृति सेवा समिति के तत्त्वावधान में शुरू किए गए महिला सशक्तिकरण केंद्र के जरिए 27 गांवों की 4200 से अधिक महिलाओं के रोजगार का जरिया बन गए हैं। दीपक कहते हैं, 'फिलीपींस से लौटकर सबसे पहला काम महिला सशक्तिकरण केंद्र (अगस्त 2006) बनाने का किया और 330 रुपये की अटैची में चंद कागज के टुकड़ों से अपनी शुरुआत कर दी। यह अटैची ही मेरा ऑफिस थी और इसी में बंद थे मेरे सपने।' महिला सशक्तिकरण केंद्र की 35 महिला सदस्यों और 15 हजार रुपये से दीपक ने अपने सपनों की नींव रखी। ग्रामीण महिलाओं को रोजगार के अवसर मुहैया करवाने के लिए उन्होंने अपने ही गांव में माइक्रोफाइनेंस (लघुवित्त) कार्यक्रम शुरू किया। दीपक अब तक 76 लाख रुपये का ऋण लघुवित्त के जरिए महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए दे चुके हैं। शुरुआती मुश्किलों के बारे में दीपक बताते हैं, 'जयपुर के एमएसएमई विकास संस्थान से एनजीओ प्रबंधन कोर्स करने के साथ ही मैंने काम शुरू किया और इधर–उधर से सात लाख रुपये जुटाए। दिसंबर 2006 में राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की ओर से 50 स्वयंसहायता समूह बनाने के लिए सहयोग मिल गया। इसी

मेहनत का नतीजा है कि आज महिलाएं बैंकिंग प्रणाली से ज्यादा लघुवित्त के हमारे मॉडल पर भरोसा जताती हैं।' रेड एंड व्हाइट बहादुरी पुरस्कार (2000) और राजस्थान सरकार की ओर से अक्षर मित्र पुरस्कार लेने वाले दीपक कहते है, 'फिलीपींस से मैं मलेशिया, सिंगापुर, हांगकांग और थाईलैंड गया, जहां लघुवित्त के मॉडल की जानकारी जुटाई। वही जानकारी यहां आकर अपने साथियों के साथ बांटी। आज 27 गांवों का काम संभाल रहे हमारे कर्मचारियों में 70 फीसदी से ज्यादा महिलाएं हैं। अब संस्थान के सभी कर्मचारी कामकाज के साथ पत्राचार से उच्च शिक्षा भी हासिल कर रहे है। उनका आधा खर्च संस्थान की ओर से उठाया जा रहा है।'

लघु वित्त ऋण और गरीबी उन्मूलन

गरीबी के चक्रव्यूह से निकलने के लिए सूदखोर व्यवस्था से बाहर निकलने को जरूरी मानते हुए यह दावा किया जाता है कि लघुऋण तक पहुंच से गरीब परिवारों की साहूकारों पर निर्भरता कम हुई है। किसी हद तक यह दावा सही भी है और कई अध्ययनों से यह तथ्य निकलकर आया कि परिवार की छोटी–मोटी आवश्यकताओं को पूरा करने या संकट की घड़ी में अकस्मात जरूरत में समूह द्वारा मिले ऋण से महिलाओं को काफी मदद मिलती है, लेकिन साथ ही यह भी सच है कि इसके जितने बड़े दावे किए जाते है वास्तविकता में इसे उतनी सफलता नहीं मिली है।

वर्ष 2008 में **निरंतर** संस्था द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर 2,700 समूहों के साथ किए गए अध्ययन में यह बात निकलकर सामने आई कि लगभग 30 प्रतिशत समूह की महिलाएं समूहगत स्रोतों के अलावा अन्य स्रोतों से भी ऋण ले रही थीं। जिन स्रोतों से ऋण लिया गया उनमें 60 प्रतिशत ऋण गांव के महाजन से लिया गया था। स्पष्ट है कि मात्र ऋण उपलब्ध करा देने से गरीबी जैसी जटिल समस्या से नहीं जूझा जा सकता। इससे पहले दक्षिण में डी. राजशेखर द्वारा किए गए एक अन्य अध्ययन के अनुसार भी स्वयंसहायता समूह से जुड़ी होने के बावजूद लगभग 56 प्रतिशत महिलाओं ने महाजनों से ऋण लिया।

मैक्सिको के लघुऋण विशेषज्ञ अल्फोन्जो क्रिस्टलो का मानना है कि गरीबी उन्मूलन और क्षमता निर्माण का सीधा व गहरा संबंध है। उनके अनुसार, 'गरीब परिवारों तक यदि सरकार का काम सिर्फ समूह बनाकर ऋण उपलब्ध करा देने तक सीमित है तो वह गरीबी उन्मूलन नहीं, गरीबी संवर्धन कार्यक्रम कहलाना चाहिए। उन्होंने कहा कि "क्षमता निर्माण के अभाव में गरीब महिलाएं ऋण के रूप में मिले संसाधन को सार्थक तरीके से इस्तेमाल करने में अक्षम होती है। इसके फलस्वरूप उनकी आर्थिक स्थिति में तो सुधार नहीं आता बल्कि उन पर कर्ज का बोझ और लद जाता है। आय संवर्धन न होने से स्वयंसहायता समूहों से मिला ऋण उन्हें ऋण के चक्रव्यूह में फंसा देता है। इससे एक ऋण चुकाने के लिए दूसरे ऋण और दूसरे ऋण को चुकाने के लिये तीसरे ऋण का अनवरत सिलसिला शुरू हो सकता है।" बांग्लादेश में ऋण और उसके प्रभाव को समझने के लिये किए गए कई अध्ययनों ने भी इस ऋण के चक्रव्यूह की बात को स्थापित किया है।

वर्तमान लघुवित्त परिदृश्य से देखे तो लघु उद्यम एक आम शब्द बन गया है जिसके जरिए गरीब परिवारों को खासकर ग्रामीण क्षेत्रों में आमदनी के जरिए से जोड़ने का दावा किया जाता है। परंतु हकीकत में देखने में आता है कि यह शब्द जितना भारी–भरकम है इसका प्रभाव उतना ही हल्का और उथला है। किसी भी उद्योग–धंधे को चलाने के लिए, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, खास कौशल और प्रबंधकीय क्षमताओं की आवश्यकता होती है। परंतु स्वयंसहायता समूह के संदर्भ में कौशल और क्षमता का विकास करने के मौके बहुत ही सीमित अथवा न के बराबर मौजूद है। अधिकतर यह ऋण द्वारा उपक्रम महिलाओं के जरिये होता है तो क्षमता निर्माण की आवश्यकता भी दुगुनी हो जाती है। क्योंकि पारंपरिक तौर पर महिलाओं को बाहर निकलने और बाजारी व्यवस्था को समझने का मौका नहीं मिलता। परंतु अचानक इस लघु ऋण और माइक्रो एंटरप्राइज के नाम से उन पर जो जिम्मेदारियां आ जाती हैं उन्हें समुचित क्षमता निर्माण के बिना निर्वाह करना अत्यधिक मुश्किल है। परंतु फिलहाल भारत में चल रहे अधिकतर स्वसहायता कार्यक्रमों में क्षमता निर्माण सबसे कमजोर पहलू है। **निरंतर** द्वारा किए गए अध्ययन में भी यह पाया गया कि 2,700 समूहों में सिर्फ 35 समूहों को ही किसी भी प्रकार के प्रशिक्षण का अवसर मिला था। उनमें भी रोजगार या आजीविका संबंधी प्रशिक्षण तो मात्र 21 प्रतिशत समूहों को ही मिला। संभव है यही कारण है कि इतने बड़े पैमाने पर स्वयंसहायता समूहों के जरिए लघुऋण रूपी संसाधनों तक पहुंच बनाने के बाद भी गरीबी और गरीबों की स्थिति पर कोई स्पष्ट प्रभाव दिखाई नहीं देता।

गरीबी दरअसल सिर्फ आर्थिक नहीं बल्कि सामाजिक समस्या भी है जिसके मूल में आमदनी की कमी ही नहीं बल्कि संसाधनों का असमान और अन्यायपूर्ण बंटवारा है और यह सिर्फ पैसे की कमी से नहीं बल्कि जाति, धर्म और लिंग से भी जुड़ी हुई है। यही कारण है कि कुछ खास जाति या धर्म से जुड़े समुदाय अधिक गरीब हैं और उनमें सभी महिलाएं अधिकतर संसाधनहीन। जाहिर है फिर गरीबी से निपटने के लिए भी लघुऋण या माइक्रो इंटरप्राइज् काफी नहीं। इसलिए गरीबी जैसी जटिल समस्या से जूझने में सिर्फ रणनीति ही नहीं नजरिए को भी अधिक व्यापक और समेकित करने की आवश्यकता है। इसके लिये जरूरी है कि हमारा दृष्टिकोण मात्र आमदनी बढ़ाने तक सीमित न होकर आजीविका सुनिश्चित करने वाला हो।

आजीविका के दृष्टिकोण में मात्र आमदनी अथवा रोजगार नहीं बल्कि संसाधनों तक पहुंच, उनका न्यायपूर्ण बंटवारा, स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छ जल इत्यादि भी शामिल होते हैं।

लघु ऋण और महिला सशक्तिकरण

लघुऋण विशेषज्ञ व अध्ययनकर्ता लिण्डा मायो के अनुसार, "क्योंकि गरीबी की बुनियाद में असमानता और भेदभाव है इसलिए जब तक सामाजिक न्याय व स्त्रियों की समानता का मुद्दा हल नहीं होगा। गरीबी का मुद्दा हल नहीं किया जा सकता।" परंतु स्वसहायता समूहों के जरिए जो ऋण प्राप्त होता है तो यह उम्मीद की जाती है कि महिलाएं इस संसाधन का उपयोग परिवार की आर्थिक स्थिति सुधारने में करेंगी। इस सोच के तहत न सिर्फ महिलाओं पर आर्थिक योगदान करने का दबाव बढ़ रहा है बल्कि उनके अन्य कामों, खासकर घर व खेती के आय रहित कामों को और अधिक नगण्य बनाया जा रहा है। जहां एक ओर महिलाओं के घरेलू कामों को पहचान देने का संघर्ष चल रहा है, वहीं दूसरी ओर समूहों के माध्यम

से महिलाओं के आर्थिक योगदान को बढ़ावा देकर इनके अन्य योगदानों को अनदेखा किया जा रहा है। इस प्रक्रिया को न्यायपूर्ण नहीं कहा जा सकता।

इसके साथ ही महिलाओं द्वारा लिए गए ऋण की वापसी भी महिलाओं की ही जिम्मेदारी बन जाती है, जबकि ऋण का उपयोग पूरे परिवार के लिए होता है। ऋण वापसी के दबाव के चलते कई अध्ययनों में यह पाया गया कि महिलाओं के काम के घंटे भी बढ़ गए जबकि गरीबी उन्मूलन की भांति ही महिला सशक्तिकरण भी स्वयंसहायता समूहों का एक खास मकसद है। बांग्लादेश में जहां सबसे अधिक सफल लघुऋण का कार्यक्रम होने के दावे किए जाते हैं वहां हुए कई अध्ययनों ने यह स्थापित किया कि इससे महिलाओं पर अत्यधिक बोझ पड़ गया है। जहां एक तरफ पारंपरिक पुरुष सत्ता के क्षेत्र, ऋण और उसकी अदायगी की जिम्मेदारी महिलाओं पर आ गई है वहीं उनकी परंपरागत जिम्मेदारियों में कोई कमी नहीं हुई है। क्या इस स्थिति को वास्तविक रूप में सशक्तिकरण कहा जा सकता है?

नारीवादी विचारकों के अनुसार, महिला सशक्तिकरण के केंद्र में सत्ता, व उसका बंटवारा होता है। सत्ताहीन वर्गों/समुदायों अथवा लिंगों का सत्ता पर नियंत्रण और उसके न्यायपूर्ण बंटवारे की प्रक्रिया से ही सशक्तिकरण संभव है। यहां सत्ता को सिर्फ राजनीतिक, धार्मिक व सामाजिक संदर्भों में ही नहीं बल्कि भौतिक (संसाधन) व व्यक्तिगत संदर्भों में भी समझना आवश्यक है। महिला सशक्तिकरण के संदर्भों में देखे तो जेंडर की सामाजिक समझ, परिभाषा व भूमिकाएं लगभग सभी पितृ सत्तात्मक समाज द्वारा तय की गई है व सत्ता भी उन्हीं के हाथों में है। अतः सशक्तिकरण की प्रक्रिया में निहित है जेंडर की सामाजिक समझ व सोच का बदलाव, संसाधनों पर महिलाओं का नियंत्रण तथा महिला व पुरुष की सामाजिक भूमिकाओं और छवि का बदलाव। इन प्रक्रियाओं की समझ और इनको चुनौती देकर ही महिलाओं के जीवन में मूलभूत बदलाव लाया जा सकता है।

परंतु देखने में आता है कि अधिकतर संस्थाएं व कार्यक्रम खासतौर पर सरकारी कार्यक्रम व परियोजनाएं, समूह और उनकी गतिविधियों को बहुत ही सीमित दायरों में देखते हैं। उदाहरण के लिये समूहों का पंचायत से जुड़ाव। पंचायत यदि स्थानीय स्तर पर प्रशासन का स्वरूप है तो महिलाओं की इसमें सक्रिय भागीदारी होनी चाहिए। पंचायत से जुड़कर वे न सिर्फ सत्ता का हिस्सा बन समुदाय स्तर पर निर्णय प्रक्रियाओं से जुड़ सकती है बल्कि प्रशासन व राज्य से जवाबदेही की मांग भी कर सकती हैं। लेकिन **'निरंतर'** द्वारा किए गए अध्ययन में स्पष्ट निकलकर आया कि 50 प्रतिशत से भी कम समूहों ने पंचायत के साथ कोई जुड़ाव बनाया और जिन समूहों ने जुड़ाव की बात की, उनमें से भी अधिकतर यानी लगभग 70 प्रतिशत समूहों से अधिकतर समूह नेताओं द्वारा ही ग्रामसभा बैठकों में भागीदारी निभाई गई है। अर्थात् उन समूहों की भी अधिकतर सदस्य पंचायत की प्रक्रियाओं से दूर ही रहीं।

यह एक उदाहरण था, समूह के सशक्तिकरण से दावे और हकीकत के बीच फासले को उजागर करने का। इसी तरह और भी बहुत–सी प्रक्रियाएं है जिन्हें सशक्तिकरण प्रक्रिया का अनिवार्य हिस्सा माना जाता है, जैसे शिक्षा अर्थात् सीखने–सिखाने के औपचारिक व अनौपचारिक अवसर व क्षमता निर्माण अवसर जो कि अधिकतर समूहों में सिरे से नदारद है। यह बिंदु तब और भी महत्वपूर्ण हो जाता है जब अधिकतर प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम या तो बंद कर दिए गए हैं अथवा उन्हें स्वसहायता समूह कार्यक्रमों में तब्दील कर दिया गया है। कई कार्यक्रम समूह आधारित शिक्षा कार्यक्रम चलाने का दावा भी कर रहे हैं परंतु इन समूहों में भी बचत व ऋण की केंद्रीयता तो है ही, साथ ही शिक्षा व साक्षरता के आधे–अधूरे प्रयास को ही काफी मान लिया जाता है। हमें इस रवैये को भी समझने और बदलने की आवश्यकता है।

निष्कर्ष

वर्तमान स्थिति में स्वसहायता समूह और लघुऋण वह हकीकत है जिससे आंख नहीं चुराई जा सकती तो उनसे जुड़ने वाली महिलाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति उससे भी बड़ी हकीकत। महिलाओं को इन समूहों के केंद्र में रखकर गरीबी उन्मूलन के लिये लंबे समय तक यंत्र की भांति इस्तेमाल नहीं किया जा सकता।

(लेखिका जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर में समाजशास्त्र विभाग में अतिथि प्रवक्ता हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : **कुरुक्षेत्र** एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक ..... दिनांक ..... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

पता .....

..... पिन .....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

परिवर्तन चक्र का हिस्सा बनकर ही हम अपेक्षित बदला सुनिश्चित कर सकेंगे

-महात्मा ग

राष्ट्रपिता को उनके
जन्म दिवस पर शत्-शत् नमन
2 अक्तूबर 2009
अंतरराष्ट्रीय अहिंसा दिवस

सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरका

davp 22202/13/0060/0910

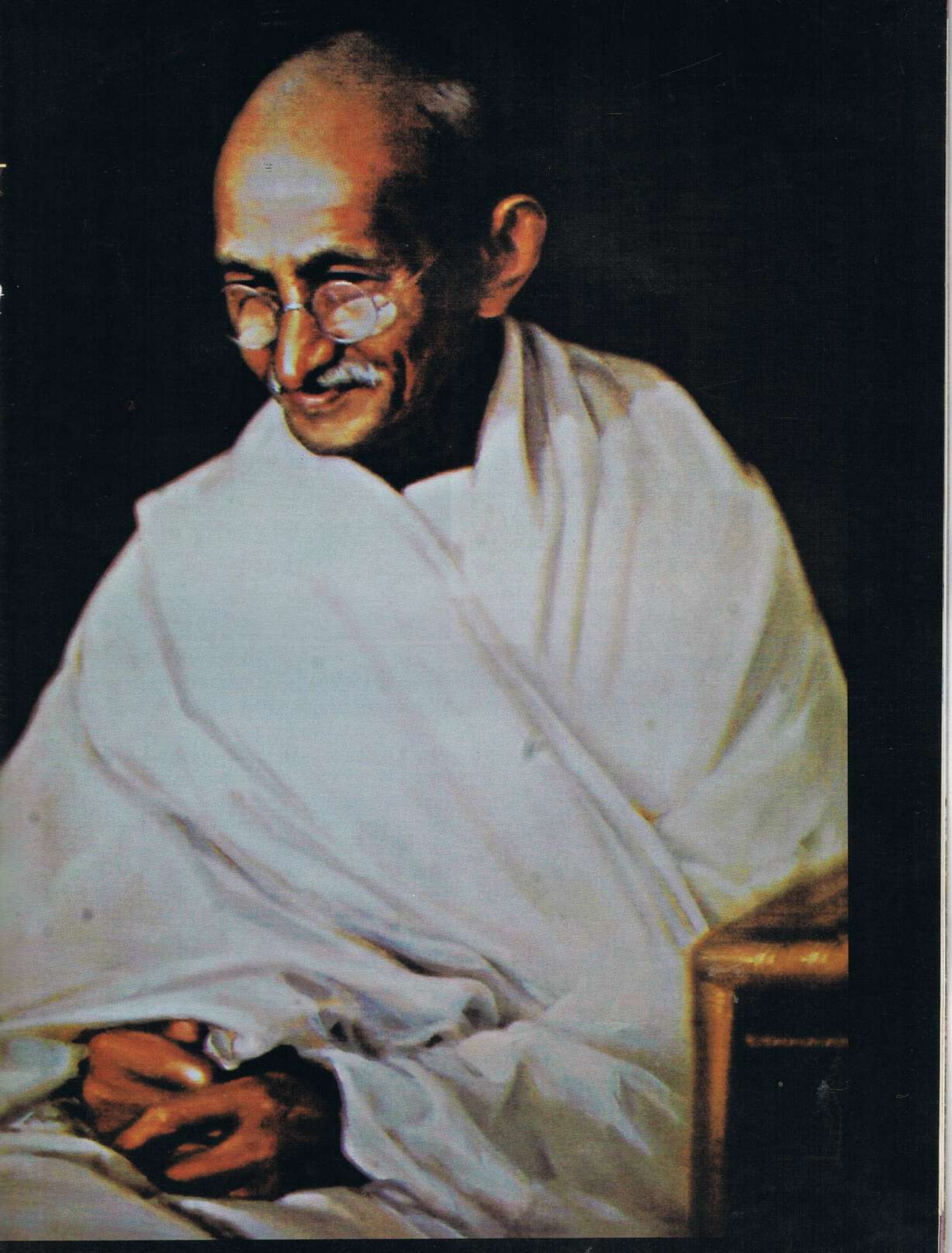

बुंदेलखण्ड से पहली बार मंत्री बने श्री प्रदीप जैन 'आदित्य' से साक्षात्कार

"आप जो काम करते हैं वह महत्वपूर्ण नहीं है बल्कि उसे कैसे करते हैं... वह महत्व रखता है"

श्री प्रदीप जैन 'आदित्य'
ग्रामीण विकास राज्यमंत्री

एक साधारण परिवार में जन्म लेकर मंत्री पद तक पहुंचे श्री प्रदीप जैन 'आदित्य' बुंदेलखंड से पहली बार चुने गए हैं और उन्हें ग्रामीण विकास राज्यमंत्री का पदभार सौंपा गया है। अपनी सफलता से उन्होंने यह साबित कर दिया है कि अगर सच्ची लगन हो तो साधारण से साधारण आदमी भी बुलन्दियों को छू सकता है। प्रस्तुत है ग्रामीण विकास राज्यमंत्री से साक्षात्कार के अंश।

प्रश्न : आपने किन आदर्शों और मूल्यों को अपने जीवन में अपनाया जिससे आप इस मुकाम तक पहुंचे?

उत्तर : हमारा देश एक लोकतांत्रिक देश है। कांग्रेस पार्टी में श्रीमती सोनिया गांधी जी के नेतृत्व में हर कार्यकर्ता को हमेशा राष्ट्रहित में सकारात्मक योगदान करने का मौका मिला है। युवा हृदय सम्राट राहुल जी ने देश के दूर–दराज के इलाकों का दौरा किया है और उनका उद्देश्य भी है कि आम आदमी की भागीदारी देश की सबसे बड़ी पंचायत में हो और सरकार की योजनाओं का लाभ अन्तिम व्यक्ति तक पहुंचे। इसीलिए हमारे यशस्वी प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह जी ने अपनी टीम में बुंदेलखण्ड के एक साधारण कार्यकर्ता को काम करने का मौका दिया है।

प्रश्न : आपका इस मंत्रालय में अब तक का अनुभव कैसा रहा और मंत्रालय की प्रमुख विशेषताओं के बारे में उल्लेख करें?

उत्तर : अनुभव बहुत अच्छा रहा। हमें अपने अत्यन्त अनुभवी एवं कर्मठ केन्द्रीय मंत्री डॉ. सी.पी. जोशी के नेतृत्व में ग्रामीण विकास के क्षेत्र में कार्य करने का मार्गदर्शन एवं नेतृत्व मिला है और मैंने मंत्रालय के अधिकारियों के माध्यम से बहुत सारे अनुभव प्राप्त किए हैं। इस मंत्रालय की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि अब मुझे एक ऐसे अनुभवी व्यक्ति के साथ काम करने का मौका मिला है जो गांवों की समस्याओं को बखूबी जानते और समझते हैं और लगातार अपने लोगों के लिए काम कर रहे हैं। हम गांवों के लोगों से जुड़ना चाहते हैं क्योंकि हमारा देश गांव में बसता है और गांव को मुख्यधारा से जोड़े बगैर हम समृद्ध भारत की कल्पना नहीं कर सकते। हम ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के जरिए देश के विभिन्न भागों में सभी गांवों तक पहुंच सकते हैं जिन्हें पारदर्शी और बिना किसी पक्षपात के कार्यान्वित किया जाता है। उसके लिए डॉ. जोशी प्रत्येक राजनैतिक दल और राज्य सरकार के साथ निरन्तर संवाद बनाए हुए हैं ताकि नरेगा का उचित रूप से कार्यान्वयन हो और जरूरतमंद परिवारों को 100 दिन का काम मिल सके।

प्रश्न : इस मंत्रालय में अभी आप कुछ महीने पहले आए है और इस दौरान आपने देश के विभिन्न भागों का दौरा किया है। कृपया मंत्रालय की योजनाओं के बारे में अपने अनुभव बताएं।

उत्तर : उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के अनेक जिलों में मैंने मंत्रालय के विभिन्न ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन का निरीक्षण किया है। और मुझे हर जगह यह देखने को मिला कि लोगों का जुड़ाव नरेगा के प्रति है। राज्य सरकारों का निरन्तर यह प्रयास होना चाहिए कि भारत सरकार की योजनाएं लागू हो और उन व्यक्तियों तक पहुंचे जिनके लिए इस योजना का निर्माण किया गया है ताकि कहीं बिचौलिए भीतरघात न कर सकें। भ्रष्टाचार का उन्मूलन एक बड़ी चुनौती है – भ्रष्टाचार एक कैंसर की तरह है जिससे हमें भारत को मुक्त करना है। तभी हम श्रीमती सोनिया गांधी और डॉ. मनमोहन सिंह के भ्रष्टाचार मुक्त भारत का सपना पूरा कर पाएंगे।

मैंने यह भी देखा कि जिन क्षेत्रों में एनआरईजीएस भली–भांति चल रही है वहां पर लोगों में आत्मविश्वास बढ़ा है। बड़ी संख्या में लोग इस योजना की ओर झुके हैं। परन्तु जहां–कही इन योजनाओं का कार्यान्वयन नहीं हुआ है वहां की तस्वीर स्वयं समझ में आ जाती है।

प्रश्न : भ्रष्टाचार की समस्या से निपटने के लिए आप क्या करना चाहेंगे?

उत्तर : देश के विकास में भ्रष्टाचार एक बहुत बड़ी समस्या है और वर्तमान समय में आम आदमी ने भी इसके आगे घुटने टेक दिए है। आम आदमी जब कभी शादी–विवाह करने जाता है तो यह पूछा जाता है कि लड़के की 'ऊपरी आमदनी' कितनी है। भ्रष्टाचार को हटाना सबसे बड़ी चुनौती है क्योंकि जब तक भ्रष्टाचार के खिलाफ आम आदमी में एक माहौल नहीं बनेगा तब तक भ्रष्टाचार समाप्त नहीं होगा। लोगों को सभी स्तरों पर, सभी कार्यालयों में भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ना होगा। भ्रष्टाचार को समाप्त करने के लिए यूपीए अध्यक्ष श्रीमती सोनिया गांधी और प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह ने आर.टी.आई. जैसा महत्वपूर्ण कानून बनाकर समाज को यह अवसर प्रदान किया है कि वे कोई भी सूचना प्राप्त कर सकते है। पहले यह सुविधा केवल सांसदों और विधायकों को ही प्राप्त थी।

प्रश्न : नरेगा के बारे में आपकी अवधारणा क्या है?

उत्तर : यह कानून फिलहाल विश्व का सबसे बड़ा कानून है जिसमें इसे लागू करने की दिशा में जाति, धर्म या राज्य को महत्ता नहीं दी जाती। जिस प्रकार सूर्य की रोशनी गरीब, अमीर, हिन्दू, मुस्लिम, सिख और ईसाई पर समान रूप से पड़ती है उसी प्रकार यह कानून देश में समान रूप से लागू है। नरेगा प्रत्येक को 100 दिन का रोजगार देने का अधिकार प्रदान करता है। वे इसके अंतर्गत काम की मांग कर सकते हैं और अपनी मेहनत का हक प्राप्त कर सकते हैं। इसका श्रेय यूपीए सरकार को जाता है, अब पलायन कम होता है क्योंकि काम गांवों में ही मिल जाता है। गरीबी की रेखा से नीचे रह रहे लोग तथा छोटे और सीमांत किसान अब अपने खेतों के स्वरूप को बदल सकते हैं। विकासशील देश भी नरेगा का अनुसरण कर रहे हैं या उससे सीख रहे हैं।

इस अधिनियम में पारदर्शिता एवं जवाबदेही सुनिश्चित करने से उचित कार्यान्वयन में मदद मिलेगी जिससे आने वाले समय में हर राज्य अपने गांवों में आदर्श गांव को दर्शा सकेंगे।

प्रश्न : पीएमजीएसवाई का देश पर आर्थिक और सामाजिक प्रभाव पड़ा है। क्या आप इस पर कोई टिप्पणी करना चाहेंगे।

उत्तर : पीएमजीएसवाई मंत्रालय का एक अति महत्वपूर्ण कार्यक्रम है जो अधिकांश गांवों को सड़कों के द्वारा आसपास के शहरों से जोड़ता है। इससे बेहतर ग्रामीण कनेक्टिविटी होती है। हमारी प्राथमिकता पीएमजीएसवाई का और अधिक कार्यान्वयन करके देश के दूरदराज के गांवों को सड़कों से जोड़ना है। सड़कों की मरम्मत और रखरखाव भी इस कार्यक्रम का मुख्य क्षेत्र है।

प्रश्न : आप हमारे पाठकों के लिए किसी अन्य विषय पर प्रकाश डालना चाहेंगे?

उत्तर : मुझे इस बात की हार्दिक प्रसन्नता है कि आपकी पत्रिका ग्रामीण स्तर तक पहुंच रही है और पाठकगण इस पत्रिका के माध्यम से सीधे तौर पर मंत्रालय से जुड़े हुए हैं। मैं इस पत्रिका के माध्यम से उन्हें सूचित करना चाहूंगा कि केंद्र सरकार की योजनाओं में उन्हें जहां–कहीं भी कोई कमी नज़र आए वे उसे निश्चित रूप से हमारे मंत्रालय के संज्ञान में लाएं और अपनी समस्याओं को हमें बेझिझक बताएं।

डॉ. सी.पी. जोशी ने तिमाही प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की

केन्द्रीय ग्रामीण विकास और पंचायती राज मंत्री डॉ.सी.पी. जोशी ने सरकार द्वारा चलाए जा रहे कार्यक्रमों के बेहतर और शीघ्र कार्यान्वयन के जरिए देश भर के लाखों ग्रामीण गरीबों तक पहुंचने के सरकार के संकल्प को दोहराया। ग्रामीण विकास और पंचायती राज मंत्रालय की तिमाही प्रगति रिपोर्ट रिलीज करने के अवसर पर 15 सितम्बर 2009 को एक प्रेस सम्मेलन में डॉ0 जोशी ने कहा कि ग्रामीण भारत में आजीविका सुरक्षा प्रदान करने में अग्रणी होने के कारण नरेगा अब पूरे देश में लागू है और इसमें ग्रामीण परिवारों के जीवन को बदलने की संभावनाएं हैं।

प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना (पीएमजीएसवाई) के बारे में मंत्री महोदय ने कहा कि कई नई पहलें शुरू की गई हैं जिनमें ई–प्रापण, सामाजिक लेखा–परीक्षा और गुणवत्ता नियंत्रण उपाय शामिल हैं ताकि ग्रामीण सड़क कनेक्टिविटी सुनिश्चित की जा सके। मार्च, 2009 से नई ग्रामीण संपर्क सड़कों का निर्माण पूरा हो चुका है जिससे 31,924 बसावटों को जोड़ा गया है और 1.55 लाख कि.मी. मौजूदा ग्रामीण मार्गों में सुधार किया गया है।

मंत्री महोदय ने कहा कि इंदिरा आवास योजना (आईएवाई) के अंतर्गत 2005–09 से भारत निर्माण के प्रथम चरण में 60 लाख आवासों का निर्माण करने के लक्ष्य की तुलना में 71 लाख आवासों का निर्माण किया गया है। अब चरण–I के लक्ष्य को दुगुना करने तथा वर्तमान वर्ष 2009–10 से शुरू होने वाले चरण–II की अगले पांच वर्षों की अवधि के दौरान 120 लाख आवासों का निर्माण करने का प्रस्ताव है।

भारतेंदु हरिश्चन्द्र पुरस्कार 2007 एवं 2008

भारतेंदु हरिश्चन्द्र पुरस्कार योजना के अंतर्गत क्रमश: वर्ष 2007 एवं 2008 के पुरस्कारों के लिए प्रविष्टियां आमंत्रित हैं। 1 जनवरी, 2007 से 31 दिसम्बर, 2007 (कैलेंडर वर्ष) तथा 1 जनवरी 2008 से 31 दिसम्बर, 2008 के दौरान निम्नलिखित विषयों पर प्रकाशित पुस्तकों/अप्रकाशित पांडुलिपियों पर पुरस्कार प्रदान किए जाएंगे : –

(क) पत्रकारिता एवं जनसंचार

यह पुरस्कार हिंदी में जनसंचार के विभिन्न माध्यमों – पत्रकारिता, प्रचार, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, फिल्म, मुद्रण, प्रकाशन आदि विषयों पर मौलिक लेखन को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से प्रकाशित पुस्तकों/पांडुलिपियों के लिए दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	35,000/–रुपये
द्वितीय पुरस्कार	25,000/–रुपये
तृतीय पुरस्कार	20,000/–रुपये
मान पुरस्कार (5)	5,000/–रुपये (प्रत्येक)

(ख) राष्ट्रीय एकता

राष्ट्रीय एकता से संबंधित विषयों पर लिखी पुस्तकों एवं पाण्डुलिपियों पर दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	15,000/–रुपये
द्वितीय पुरस्कार	10,000/–रुपये

(ग) महिला समस्या

समाज में महिलाओं की स्थिति से संबधित समसामयिक विषयों पर महिला लेखिकाओं द्वारा लिखी पुस्तकों एवं पाण्डुलिपियों पर दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	15,000/–रुपये
द्वितीय पुरस्कार	10,000/–रुपये

(घ) बाल साहित्य

बच्चों के लिए लिखी गई पुस्तकों एवं पाण्डुलिपियों पर दिया जाता है।

प्रथम पुरस्कार	15,000/–रुपये
द्वितीय पुरस्कार	10,000/–रुपये

इस योजना का विस्तृत विवरण तथा आवेदन प्रपत्र एवं नियमावली डाक द्वारा सहायक निदेशक (रा.भा.) कमरा न0 342, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉम्पलैक्स से मंगाए जा सकते हैं। इसके साथ ही पूर्ण जानकारी प्रकाशन विभाग की वेबसाइट www.publicationsdivision.nic.in से भी प्राप्त की जा सकती है।

– अपर महानिदेशक एवं प्रभारी, प्रकाशन विभाग

खोज

एनर्जी केक: ईंधन का एक नया विकल्प

पंकज कुमार

झारखंड के प्रसिद्ध ऊर्जा वैज्ञानिक डा.ए.के. सिंह की खोज एवं तकनीक पर आधारित और एनर्जी रिसर्च एप्लीकेशन, नई दिल्ली के सहयोग से निर्मित 'एनर्जी केक' आम आदमी के लिए आज वरदान साबित हो रहा है। कृषिजनित अनुपयोगी अवशेषों से निर्मित यह एनर्जी केक कमाल की ऊर्जा शक्ति साबित हो रहा है। हर तरह की प्रायोगिक जांच के बाद भारत सरकार ने इसे आम जनता को सुलभ कराने की अनुमति दी है, साथ ही इसे पेटेंट भी किया है। अब इसके वृहद् उत्पादन की प्रक्रिया शुरू हो चुकी है।

हम सबको पता है कि आज ऊर्जा की समस्या विश्व की एक बड़ी समस्या बन गई है। यहां हम उस ऊर्जा (ईंधन) की बात कर रहे हैं जिससे हम अपने घरों में खाना बनाते हैं चाहे वह एल.पी.जी. हो, कोयला हो, लकड़ी हो, सूखे पत्ते हों या गोबर के उपले हों। हमारे देश की ग्रामीण महिलाएं भोजन पकाने के लिए सैंकड़ों वर्षों से उपलों (गोइठा) और लकडियों पर निर्भर रहती आई हैं। इस ईंधन को इकट्ठा करने के लिए उन्हें स्थानीय पशुओं एवं खेत–खलिहानों, जंगलों पर निर्भर रहना पड़ता है।

इन्हें जमा करने के लिए उन्हें निरंतर मेहनत–मशक्कत एवं खेत–खलिहानों, जंगलों की खाक छाननी पड़ती है। वहीं तक इनके कष्टों का अंत नहीं होता बल्कि उन्हें इस्तेमाल करते हुए इन्हें उसके हानिकारक धुएं से भी जूझना पड़ता है। इस कष्ट को वे सदियों से चुपचाप सहती आई हैं, यही सोचकर कि यही मेरी नियति है।

पिछले कुछ वर्षों से इस परंपरागत ऊर्जा की भी भारी कमी दिखने लगी है। कम होते जंगलों एवं बढ़ती आबादी, पशुपालन के प्रति बढ़ती उदासीनता से भी ग्रामीण क्षेत्रों में रसोई के लिए परंपरागत स्रोत की भारी किल्लत पैदा हो गई है। दूसरी तरफ शहरी क्षेत्रों की भी स्थिति संतोषजनक नहीं रह गई है। दिनोंदिन बढ़ती महंगाई से सारे ऊर्जा स्रोतों को जुटाने में एक आम आदमी की हालत बहुत खराब होती जा रही है। एलपीजी गैस का कनेक्शन एवं उसका वितरण जन साधारण के लिए आज भी सुलभ नहीं है। कोयले और लकड़ी की पहुंच गांव या शहर के हर घर तक नहीं है या है भी तो उन्हें अनाप–शनाप कीमतों पर खरीदने पर मजबूर होना पड़ रहा है। साथ ही उनसे निकलने वाले खतरनाक धुएं से स्वास्थ्य पर बुरा असर भी पड़ रहा है। कुल मिलाकर ऊर्जा को प्राप्त करने की, जो एक तस्वीर बनती है वह बड़ी ही भयानक एवं कष्टकारक है।

ऊर्जा की इन्हीं समस्याओं को देखकर उन्हें बड़ी गहराई से महसूस किया झारखंड के प्रसिद्ध ऊर्जा वैज्ञानिक डा.ए.के. सिंह (आईआईटी दिल्ली) ने और इस गहन गंभीर समस्या का विकल्प तलाशने की कोशिश की है। ग्रामीण महिलाओं के प्रति उनकी गहरी संवेदना एवं सहयोगी प्रवृत्ति, अपनी योग्यता को अपने देशवासियों के कल्याण हेतु लगा देने की उनकी निर्मल भावना ही है जो उन्हें विदेश की अच्छी आर्थिक संभावना को छोड़कर अपने वतन के लोगों की खुशहाली के निमित्त यहां वापस लौटने को उद्वेलित कर गई। यहां वापस लौटकर उन्होंने एनर्जी रिसर्च एप्लीकेशन नामक ऊर्जा शोध अनुप्रयोगी संस्था का गठन किया। वे पिछले दस वर्षों से इस संस्था के लिए कार्य कर रहे हैं ताकि देश एवं समाज खासकर ग्रामीण विकास के अपने सपने को साकार कर सकें।

एनर्जी केक का उत्पादन दिल्ली, हरियाणा एवं देश के कई राज्यों में पहले से ही किया जा रहा है। अब झारखण्ड में रांची जिले के कांके प्रखंड के ग्राम सोसो (पोटाया टोली) में इसका उत्पादन केन्द्र स्थापित हो चुका है, जहां इसका उत्पादन किया जा रहा है।

एनर्जी केक से होने वाले फायदे–

- बिजली का कोई खर्च नहीं।
- हर प्रकार से पर्यावरण के हित में।

कोई रासायनिक नहीं, कोई धुआं नहीं।

500^0 से अधिक तापक्रम।

भोजन बनाने के लिए आदर्श ईंधन/जलावन एवं आदर्श अंगीठी।

जलाने एवं उपयोग करने में अत्यंत आसान।

कमरे के अन्दर रखने पर भी कोई नुकसान नहीं।

एक केक लगातार 2.5 से 3 घंटे तक पूरी आंच से जलता है।

गैस, बिजली, कोयला, लकड़ी एवं केरोसिन तेल से सस्ता ईंधन।

स्वरोजगार का माध्यम

ग्रामीण बेरोजगार युवकों/महिलाओं के लिए इसे स्वरोजगार का माध्यम बनाने की कोशिश की जा रही है। हर गांव के हर घर तक एनर्जी केक को पहुंचाने के लिए उसी गांव के किसी एक व्यक्ति या महिला को एक उद्यमी के रूप में उभारने का प्रयास किया जा रहा है ताकि भविष्य में वे गांव

समाज के प्रेरणा स्रोत बन सकें। इस रोजगार को शुरू करने से पहले इच्छुक व्यक्ति या महिला को 15 दिनों की ट्रेनिंग दी जाती है। इस ट्रेनिंग में उन्हें एनर्जी केक बनाने की विधि बतायी जाती है। ट्रेनिंग पूरी कर लेने के पश्चात् उन्हें एनर्जी केक बनाने के टूल्स दिए जाते हैं जिससे वे अपने घर पर इसका उत्पादन शुरू कर देते हैं। एनर्जी रिसर्च एप्लीकेशन की ओर से हर गांव मे एनर्जी केक बैंक बनाया जा रहा है। गांव के लोग आवश्यकतानुसार इस केक बैंक से एनर्जी केक खरीदते हैं। उद्यमी व्यक्ति अथवा महिला को प्रति केक 50 पैसे से एक रुपये तक का मुनाफा मिल जाता है। उद्यमी व्यक्ति या महिला को प्रोत्साहित करने के लिए उन्हें पुरस्कृत करने का भी कार्यक्रम चल रहा है जिसके तहत उद्यमी महिला के एक बच्चे को एनर्जी रिसर्च एप्लीकेशन की ओर से ईआरए पर्यावरण पुरस्कार के रूप में 300 रुपये प्रतिमाह तीन महीने तक दिया जा रहा है।

झारखंड राज्य की राजधानी रांची के कांके प्रखंड के अतंर्गत लगभग 20 गांवों की महिलाएं महिला स्वयंसहायता समूह के माध्यम से इस कार्य को कर रही हैं। जल्द ही वहां कुछ और उत्पादन केन्द्रों की स्थापना की जाएगी जिसके माध्यम से एनर्जी केक के उत्पादन की प्रक्रिया को और तेज किया जाएगा तत्पश्चात इसे राज्य के अन्य जिलों में भी फैलाने की योजना है।

कोई भी नया विचार जब यथार्थ के धरातल पर पांव रखता है तो उसे नित नई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। डॉ सिंह के लिए भी यही समस्या है। सीमित संसाधनों के बल पर असीमित कार्य को अंजाम देने की उनकी जीवटता एवं जुनून युवाओं के लिए प्रेरणा है । यह ऊर्जा आध्यात्मिक भी है जिससे हमें विपरीत परिस्थितियों में भी एकलव्य की भांति अपने कार्य में तन्मयता से लगे रहने की शक्ति मिलती है।

(लेखक एनर्जी रिसर्च एप्लीकेशंस में प्रबंधक हैं।)
ई–मेलः energyresupp@sity.com

ग्रामीण डॉक्टरों की बनेगी फौज

ग्रामीण क्षेत्रों में डॉक्टरों की कमी को पूरा करने का फार्मूला सरकार ने इजाद कर लिया है। **स्वास्थ्य मंत्री–गुलाम नबी आजाद** ने बताया कि अब ऐसे डॉक्टरों की फौज तैयार की जाएगी जो गांवों में ही काम करेंगे। योजना के अंतर्गत प्रत्येक राज्य से 50 छात्रों का चयन किया जाएगा और उन्हें साढ़े चार साल के डिग्री कार्यक्रम के दौरान अधिकतर ग्रामीण इलाकों में प्रशिक्षित किया जाएगा। डिग्री हासिल कर लेने के बाद उन्हें अपने जिले के किसी ग्रामीण इलाके में नियुक्त किया जाएगा। मेडिकल कौंसिल ऑफ इंडिया (एमसीआई) ने इन छात्रों के लिए पाठ्यक्रम भी तैयार कर लिया है। एमसीआई के अध्यक्ष डॉ. केतन देसाई कहते हैं, 'हमारा प्रस्ताव है कि इन्हें एमबीबीएस (ग्रामीण) कहा जाए। कोर्स पूरा करने के बाद पहले दस वर्षों तक इन्हें शहरों में प्रैक्टिस करने की इजाजत नहीं होगी।' कम से कम 10 साल तक उन्हें अपने गांव को सेवा देनी होगी।

- एमबीबीएस (ग्रामीण) की डिग्री देने की तैयारी।
- इंटर के अंकों के आधार पर बिना प्रवेश परीक्षा दिए ग्रामीण छात्र चुने जाएंगे ।
- प्रत्येक राज्य से 50 छात्रों को तीन चरणों में साढ़े चार साल का कोर्स कराया जाएगा ।
- डिग्री के बाद कम से कम 10 साल गांव की सेवा करनी होगी।

स्वरोजगार

गांव में बोनसाई बनाएं लाभ कमाएं

आर.एस. सैंगर एवं रेशू चौधरी

'बोनसाई' बागवानी और कला दोनों का मिश्रण है; इसमें आपकी कलाकारी झलकती है। आप अपने बरामदे में पीपल या बरगद का पेड़ लगाने की कल्पना भी नहीं कर सकते पर इसका बोनसाई बनाकर बैठक में सजा सकते हैं। यदि खेती के साथ-साथ अन्य कोई कार्य किया जाए तो हमारे किसान भाईयों की आर्थिक स्थिति मजबूत हो सकती है। जैसे पौधों की नर्सरी बनाकर पौधे बेचना, फूलों से बुके, गुलदस्ते, बोनसाई बनाना बहुत ही आसान होता है तथा यह एक ऐसी कला है जिसे वृक्षों से प्रेम रखने वाले व्यक्ति अच्छी प्रकार से जानते हैं।

बोनसाई बनाने के लिए पौधे को हमेशा कांट छांट कर तथा उसको किसी सहारे से बांधकर उचित आकार में रखा जाता है। जिससे यह पौधा पूर्ण परिपक्व दिखाई देता है। अर्थात् बोनसाई मूलतः पेड़ों व झाड़ियों को अनुपातिक छोटे पात्रों में रखने और इन पौधों की अधिक उम्र दर्शाने के लिए बौना करने की तकनीकों से उनका उपचार

करने की प्रक्रिया है। इसे समझने के बाद बनाना कठिन नहीं है। बोनसाई हमेशा तिकोने आकार से बनता है। पौधे का फैलाव नीचे की ओर अधिक होता है ऊपर जाते जाते यह नुकीला हो जाता है। बोनसाई में सामने और पिछला हिस्सा होता है लिहाजा इसे ध्यान में रख कर कटिंग करें। बोनसाई बनाने के लिए पीपल या बरगद का छोटा पौधा लें। इनके अलावा फाइकस वेरायटी के पौधे आदि, फूल वाले पौधे जैसे गुडहल, बोगेनबेलिया, मधुकामिनी, हेज में काम वाले ड्यूरांटा वेरायटी के बोनसाई अच्छे बनते हैं। पौधे के सामने का हिस्सा अपनी तरफ रखें जहां से तना साफ नजर आता हो और उसे काटती हुई मुख्य शाखाएं न हो। मुख्य शाखा से निकली हुई शाखाएं यदि दूसरी मुख्य शाखा को काटती हो तो उन्हें हटा दें। ध्यान रहे नीचे की 2 पंक्तियां छोड़ कर काटें ताकि जगह खाली न दिखें, मुख्य तने को कभी बीच से न काटें। इस की लंबाई सब से अधिक होनी चाहिए। यदि पौधा बड़ा है तो एकदम से छोटा न करें।

बोनसाई हेतु पौधों का चयनः – बोनसाई बनाने के लिए ऐसे पौधों का चयन करना अति उत्तम रहता है। जिसमें सामान्यतः छोटे–छोटे फल फूल आते हों तथा पतझड़ कम से कम हों। अधिक पतझड़ वाले पौधे पत्तियां गिरा देते हैं जिससे कि पौधे की खूबसूरती कम हो जाती है। इसके अलावा निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना अनिवार्य हैः–

- चयनित पौधे का जीवनकाल अधिक लम्बा हो।
- चयनित पौधा आकार एवं प्रकार में सुन्दर तथा बड़ा वृक्ष बनने वाला हो।
- चयनित पौधा जैविक रूप से कठोर परिस्थितियां सहन करने की शक्ति रखता हो।
- चयनित पौधों की पत्तियां व फूल, फल देखने में अति सुन्दर व आकर्षक हों।

बोनसाई हेतु पौधे के प्रकार

पत्तियों वाले पौधेः– पीपल, बरगद, पाकड़, चीड़, रबर, बैन्जामीना, पुतरंजीवा आदि।

फूल वाले पौधेः– अमलतास, गुलमोहर, केशिया अडूसा, चम्पा बोगनविलिया आदि।

फल वाले पौधेः– आम, जामुन, लीची, चाइनीज अमरूद, चाइनीज, नारंगी, चीकू आंवला आदि।

बोनसाई हेतु गमलों का चयनः– बोनसाई बनाने के लिए विभिन्न आकार के गमलों/बर्तनों को उपयोग में लाया जाता है जैसे तिकोन, अण्डाकार, गोल, चौकोर वर्गाकार, लम्बे वर्गाकार। इन सभी गमलों की गहराई भिन्न–भिन्न होती है तथा देखने में सुन्दर लगते हैं। इन गमलों/बर्तनों से पानी के निकास हेतु इनकी पेन्दी में दो तीन छिद्र अवश्य हों।

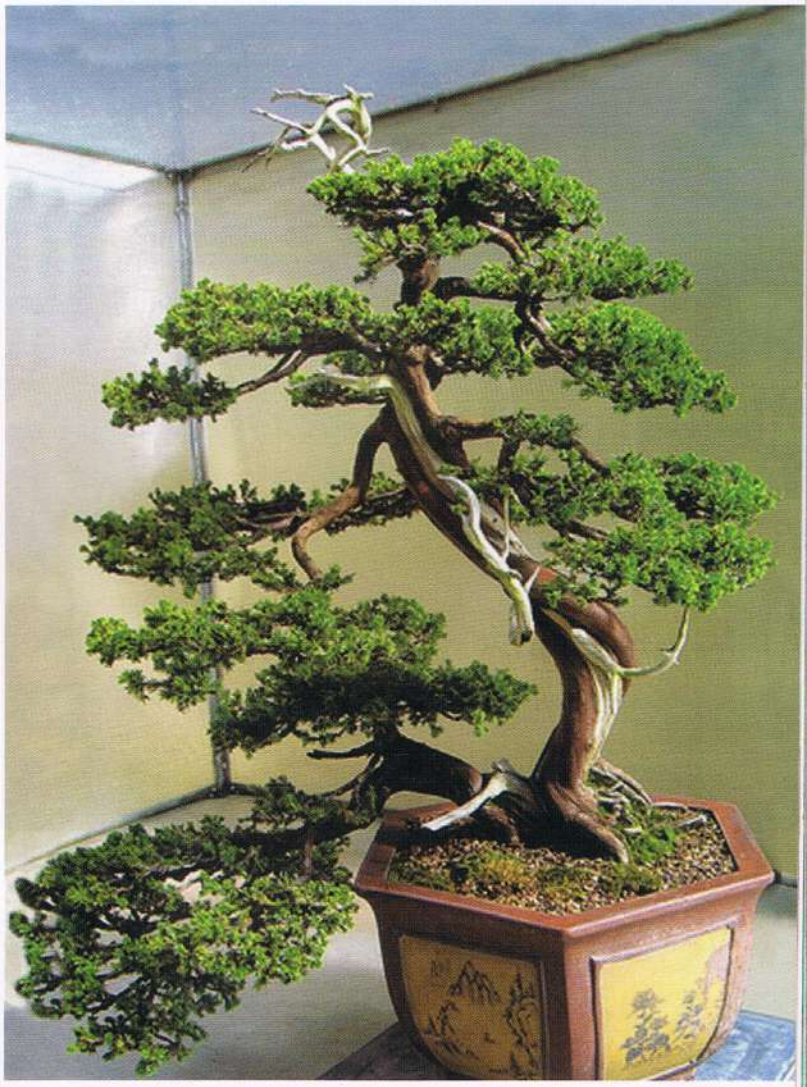

बोनसाई हेतु मिट्टीः– मिट्टी ऐसा माध्यम है जिसमें पौधा उगता है एवं उस पौधे का पूर्ण स्वास्थ्य उस मिट्टी की उर्वरकता पर निर्भर करता है। बोनसाई उत्पादक को मिट्टी तैयार करने के बारे में बुनियादी बातों को समझना बहुत जरूरी है। बोनसाई के लिए मिट्टी भुरभुरी होनी चाहिये ताकि पानी आसानी से बाहर निकल सके। साथ ही इसमें कुछ पानी बनाये रखना चाहिए ताकि दिन में पौधा सूखे नहीं। यदि मिट्टी के कणों के बीच अधिक पानी कायम रहता है तो इससे बारीक जड़े, सड़ी खाद, रेत व पत्ती की सड़ी खाद को बराबर–बराबर मात्रा में मिलाकर भरना उपयुक्त रहता है।

प्रवर्धनः– बोनसाई के लिए पौधे मुख्यतः वानस्पतिक प्रवर्धन विधि द्वारा ही तैयार करना उचित होता है। यदि बीज द्वारा पौधे तैयार किए जायेंगे तो पौधों को बढ़ने एवं परिपक्व होने में अधिक समय लगेगा। इसलिए पौधों को वानस्पतिक प्रवर्धन विधि द्वारा ही उगाकर लगाना चाहिए। परन्तु ऐसे पौधे जो वानस्पतिक प्रवर्धन द्वारा तैयार नहीं किए जाते उन पौधों को बीजों से तैयार करके बोनसाई के लिए उपयोग किया जाता है।

रोपाई का समयः– मैदानी क्षेत्रों में पौधों की ज्यादातर प्रजातियां जुलाई–अगस्त के माह में बोनसाई हेतु रोपी जाती हैं। परन्तु ऐसे पौधे जो पतझड़ वाले होते हैं उनकी रोपाई फरवरी–मार्च में करना उचित रहता है।

रोपाई की विधिः– सर्वप्रथम बोनसाई पात्र के नीचे बने छिद्रों को भली भांति साफ कर लिया जाता है। अब इन छिद्रों के ऊपर कुछ ईंट आदि के टुकड़े रख दिए जाते हैं जिससे निकास की समस्या उत्पन्न न हो। अब इन टुकड़ों के ऊपर एक से दो इन्च मोटी रेत की तह लगा दी जाती है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि मिश्रण पूर्णतः नहीं भरा जायें, उसमें कुछ जगह खाली छोड़ दी जाये। पौधा लगने के उपरान्त उस बर्तन/गमले को पूर्णतः मिट्टी से भरकर मिट्टी को अच्छी प्रकार से पौधे के पास दबा दिया जाता है जिससे पौधे इधर–उधर न गिरें एवं पौधे की जड़े ठीक प्रकार से गमले की मिट्टी से ढक जायें।

सिचांई की आवश्यकताः– रोपाई के तुरन्त बाद पौधे की सिंचाई करना नितान्त आवश्यक होता है। गर्मी के दिनों में सिंचाई में इसकी अधिक आवश्यकता होती है जबकि सर्दियों में इसकी आवश्यकता कम रहती है। अतः आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिये।

वायरिंग किस किस्म की

शाखाओं की सही आकार देने के लिए वायरिंग की जरूरत पड़ती है। इसके लिए तांबे या एल्युमिनियम के तार का इस्तेमाल करें। लोहे के तार में जंग लग जाता है जिससे पौधे की शोभा बिगड़ जाती है। शाखा को यदि नीचे की ओर अधिक झुकाना है तो पासपास तार लपेटें। मोटी शाखा के लिए मोटा तार लें। मोटी शाखा और उससे निकलती 2 शाखाओं को लपेटने के लिए दोहरा तार लें। आगे जाकर दोनों तारों को एक–एक शाखा पर लपेट दें, फिर शाखाओं पर हल्का दबाव दे कर मोड़ दें। तार कभी लम्बे समय तक न बांधे 2 महीने से अधिक बांधने की जरूरत हो तो तार खोल कर दोबारा बांधें या रस्सी कर प्रयोग करें। एक गमले में एक ही बोनसाई लगाएं तो अच्छा है। फिलर के तौर पर छोटी घास लगा सकते हैं फ्लावर अरेंजमेंट की तरह कुछ पौधों को एक साथ लगाया जा सकता है पर वह बोनसाई में नहीं आता। एक बार बोनसाई लग जाने के बाद नियमित देखभाल से यह हराभरा हो जाता है। आकार सही रखने के लिए इसकी हमेशा कांटछांट करनी पड़ती है।

पेड़ नहीं तो बोनसाई ही सही

बोनसाई बनाने में ऐसा पौधा लेना चाहिए जिसमें तना व शाखाएं स्पष्ट रूप से निकल चुकी हों। यानी पौधा कम से कम एक साल का हो, पौधा लचीला और छोटी पत्तियों वाला हो, इसका जीवन काल कम से कम 20–25 साल होना चाहिए। 2–3 साल के जीवनकाल वाला पौधा बोनसाई बनाते बनाते ही खत्म हो जाता है। बोनसाई झुके हुए, सीधे, अनियमित सीधे हवा से एक तरफ मुड़े हुए, झरने की तरह नीचे गिरते हुए हो सकते है। पत्थर में उगे बोनसाई बहुत अच्छे लगते है इस के कई 'प्लांट ग्रुप' यानी 'बोनसाई फारेस्ट' भी लगाया जा सकता है। अतिरिक्त, पौधे लगाकर इकेबाना बनाते है इसे जापानी बहुत पसंद करते हैं।

बोनसाई की कितनी हो ऊंचाई

बोनसाई की अधिकतम ऊंचाई 3 इंच से 8 फुट तक हो सकती है। कम ऊंचाई के पौधे ज्यादा आकर्षित करते हैं। जापान में 800 साल पुराना बोनसाई है दरअसल उस की उम्र पौधे की किस्म पर निर्भर करती है फिर देखभाल पर। वहां इसे पारिवारिक विरासत के रूप में लिया जाता है। एक बोनसाई को 4–5 पीढ़ियां संवारती हैं लेकिन यह जान कर आश्चर्य होगा कि बोनसाई की शुरूआत जापान ने नहीं चीन ने की थी। जापान ने इसे विकसित किया है जापान के अलावा इंडोनेशिया, मलेशिया आदि देशों में भी ये काफी लोकप्रिय है।

पद्धतियों अथवा बोनसाई का आकार

बोनसाई की निम्नलिखित पद्धतियां होती हैं:–

नियमित सीधी पद्धतिः इस पद्धति में वृक्ष सीधा तरीके से बढ़ता है जहां सिरे और जड़े एक उर्ध्वाकार रेखा में रहती है। इस पद्धति की अन्य शाखायें एक पिरामिड या गोल आकार में ढाली जाती हैं।

अनियमित सीधी पद्धतिः नियमित सीधी पद्धति की भांति ही वृक्ष ऊपर की ओर बढ़ता है। लेकिन तने में कई सन्तुलित घुमाव होते हैं। घुमाव के आधार के अधिक नजदीक और पेड़ के सिरे की ओर कम होते हैं। शाखाओं की स्थिति का विन्यास नियमित सीधी पद्धति की भांति ही किया जाता है।

तिरछी पद्धतिः इस पद्धति में वृक्ष का तना जड़ के दायें या बायें 40 अंश के कोण पर बढ़ता है। जड़े झुकाव की ओर अधिक फैलती हैं जिससे पेड़ अधिक संतुलित दिखाई पड़ता है तथा सीधा अथवा टेढ़ा हो सकता है।

जुड़वा तना पद्धतिः इस पद्धति में एक पौधे की जड़ से दूसरा तना निकल जाता है जिसको जुड़वा तना पद्धति कहते हैं तथा जुड़वा तना वृक्ष को एक नियमित ओर तिरछी पद्धतियों के बोनसाइयों में ढाला जा सकता है।

बहुतना पद्धतिः जब एक जड़ पुंज से निकले दो या दो से अधिक तने हो, तो उसे बहुतना पद्धति कहते हैं। सभी तने विभिन्न बिन्दुओं से उगते है और उनकी मोटाई विषम होती है।

झुकी पद्धतिः इस पद्धति में अनेक शाखाओं वाला कम आयु का पौधा चुना जाता है। एक तरफ की शाखाओं को काट लिया जाता है या तार से दूसरी ओर बांध दिया जाता है। तने के बिना शाखाओं के क्षेत्र को गहराई से छीला जाता है। तैयार किए गए इस पेड़ को एक गहरे त्रिकोणाकार पात्र में लगाया जाता है। भीतर की जड़ों से लेकर तने के सिरे तक तांबे का तार बांधा जाता है ताकि वृक्ष मजबूती से खड़ा रहे। निकलने के बाद मुख्य जड़–पुंज को काटकर कम किया जाता है और एक छिछले लम्बे पात्र में वृक्षों को रखा जाता है।

वन या समूह रोपण पद्धतिः इस पद्धति में एक ही प्रकार के दो या दो से अधिक वृक्षों को एक छिछले पात्र में साथ समूहबद्ध किया जाता है ताकि वन जैसा दिखाई दें। इस पद्धति में एक से लेकर 15 तक पौधे लगाये जा सकते हैं।

झाड़ूनुमा पद्धतिः इस पद्धति में किसी वृक्ष को ढालने के लिए एक पंखे के आकार में सभी शाखाओं को तार से बांध दिया जाता है। कोई भी शाखा एक दूसरे से आर–पार नहीं होनी चाहिए।

बोनसाई का आकार एवं वृद्धिः

लघु बोनसाई	–	15 सेंमी से कम
छोटी बोनसाई	–	15 सेंमी से 30 सेंमी तक
मध्यम बोनसाई	–	30 सेंमी से 60 सेंमी तक
बड़ी बोनसाई	–	60 सेंमी से ऊपर

बोनसाई बनाने के लिए उसके आकार का निर्धारण, प्रकृति में उसी प्रकार के वृक्ष के आकार द्वारा किया जाना चाहिए। आकार देने के लिए काट–छांट एवं एल्यूमिनियम के तार से शाखाओं को बांधना आवश्यक होता है।

पानी देने की तकनीक

बोनसाई के पौधों में मिट्टी में सोखने लायक पानी एक बार रोज डालें। गर्मी के मौसम में 2–3 बार डालें। यदि मिट्टी बह जाती हो तो सूखी काई डालें। बरसात के मौसम में दीवारों पर उगने वाली काई (ग्रीन मोस) मिल जाए तो और भी अच्छा है यह बहुत सुन्दर दिखती है।

पुनः रोपण

जब पौधे की अच्छी देखभाल की जाती है और वे स्वस्थ रहते हैं तब अनेक नई जड़ें निकलती हैं तथा कुछ समय में ये जड़ें पात्र को इतना घेर लेती हैं कि मिट्टी में हवा या पानी जाना बंद हो जाता है। ये जड़ें मिट्टी का बहुत सारा पोषण तत्व खा जाती हैं जिससे पौधा अस्वस्थ दिखाई देने लगता है तथा जड़ों एवं शाखाओं की कटाई–छंटाई करके पौधों को पुनः रोप दिया जाता है। इस कार्य के लिए जुलाई–अगस्त एवं फरवरी–मार्च का समय उपयुक्त माना जाता है।

खाद एवं उर्वरक

बोनसाई में सामान्य रूप से कार्बनिक खादों का ही अधिक उपयोग किया जाता है जिसमें मुख्य है– गोबर की सड़ी खाद, नीम की खली, अरण्डी की खली, पत्ती की सड़ी खाद आदि। नाइट्रोजन युक्त खादों का प्रयोग नहीं के बराबर होता है। वर्ष में दो या तीन बार पौधे की उम्र के अनुसार नीम की खली या हड्डी का चूरा डाला जा सकता है।

कीट एवं रोग नियंत्रण

यदि बोनसाई पर रोगों या कीटों का हमला हो और ठीक से उपचार न किया जाए तो इससे कुछ महत्वपूर्ण शाखाओं को नुकसान पहुंच सकता है जिससे आपकी बोनसाई खराब हो सकती है। इसके लिए समय–समय पर कीट एवं रोगों पर नियंत्रण करना आवश्यक है। अतः कीटों की रोकथाम के लिए 0.02 प्रतिशत मोनोक्रॉटोफॉस एवं फफूंदी की रोकथाम के लिए मोनोक्रॉटोफॉस या कार्बण्डाजिम की 0.02 प्रतिशत का छिड़काव पौधों पर करने से कीट एवं रोगों से पौधों का बचाया जा सकता है।

अतः किसान भाइयों यदि आप उपरोक्त विधि अनुसार अपने घर या खेत पर बोनसाई बनाकर बेचेंगे तो आपको उसके अच्छे दाम मिलेंगे। बोनसाई की कीमत उसकी आयु से तय की जाती है जैसे 5 वर्ष पुरानी बोनसाई की कीमत लगभग 800 से 1000 रुपये होती है।

कटिंग कब करें

प्रायः देखा गया है कि मानसून और वसंत में पौधे ज्यादा बढ़ते हैं। उस समय कटिंग जरूरी है तो साल भर थोड़ी कटिंग करते रहें जिससे पौधे अच्छी तरह विकसित होते हैं। कुछ लोगों में यह भ्रांति है कि बोनसाई बनाना बुरी चीज है क्योंकि पौधों को बार–बार काटा जाता है। आप गमले के पौधे भी काटते हैं और हेज की कटाई भी करते हैं। जब वह बुरा नहीं है तो बोनसाई कैसे बुरा है बल्कि यह तो अच्छी कोशिश है। जहां पेड़ नहीं लगा सकते वहां बोनसाई एक अच्छा विकल्प है जिससे घर–आंगन की रौनक तो बढ़ेगी ही, साथ ही घर के लोगों को आक्सीजन भी काफी मात्रा में मिलती रहेगी।

(लेखक सरदार वल्लभभाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ में एसोसिएट प्रोफेसर हैं।

ई–मेल : rs.svbpaty@gmail.com

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले। आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की ब्यार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। हमारा पता है – वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110001, आप हमें लेख ई–मेल भी कर सकते हैं।

ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

भरपूर कमाई हेतु मटर की उन्नत खेती

जगपाल सिंह मलिक

भारत में उगाई जाने वाली दलहनी फसलों में मटर का महत्वपूर्ण स्थान है। मटर मुख्य रूप से सब्जी व दाल के लिए प्रयोग की जाती है। इसके दानों में 20–22 प्रतिशत प्रोटीन के साथ–साथ अन्य आवश्यक तत्व जैसे कैल्शियम, लोहा, थायमिन और नियासिन पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। इसकी हरी फलियों में 7.0 प्रतिशत प्रोटीन पाई जाती है। मटर की हरी फसल का प्रयोग पशुओं के चारे व हरी खाद के रूप में भी किया जाता है। पकी फसल से दाना निकालने के बाद प्राप्त भूसा पशुओं को खिलाने के काम आता है। मटर की पूर्ण विकसित हरी फलियों और हरे दानों को सुखाकर डिब्बाबन्दी भी की जाती है। इसे संरक्षित कर बेमौसमी सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है। खाना बनाने में यह विभिन्न सब्जियों के साथ मेल खा जाती है। अतः यह सारे संसार में लोकप्रिय सब्जी है।

मटर फसल मृदा क्षरण रोकने, नमी संरक्षण व मृदा को उपजाऊ बनाने में भी सहायक है। भारत में मटर उत्पादन में क्षेत्रफल के आधार पर क्रमशः उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, हरियाणा व राजस्थान का स्थान है। भारत में कुल मटर उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत अकेले उत्तर प्रदेश में पैदा होता है। मटर की खेती में कुछ विशेष बातों का ध्यान रखना आवश्यक है। जिनमें प्रमुख रूप से उचित प्रजाति का चुनाव, नवीनतम सस्य प्रौद्योगिकी एवं समय पर फसल सुरक्षा उपाय अपनाना बहुत जरूरी है। इस तरह किसान भाई मटर की खेती से भरपूर कमाई कर सकते हैं।

मटर की उत्पादकता में कमी के प्रमुख कारण

- अपने क्षेत्र के लिए अनुमोदित उन्नतशील किस्मों का चुनाव न करना।
- अधिक उत्पादन देने वाली नवीनतम व उन्नतशील प्रजातियों का प्रमाणित बीज उपलब्ध न होना।
- बाजार की मांग व साधन सीमा के अनुसार किस्मों का चयन न करना।
- मटर की खेती में सस्य प्रबन्धन क्रियाओं का अवैज्ञानिक ढंग से अपनाया जाना।

मटर बुवाई हेतु कल्टीवेटर से जुताई आवश्यक

- मटर की खेती में जैविक उर्वरकों मुख्यतः राइजोबियम व फास्फो–सोल्यूबिलाइजिंग बैक्टीरिया (पी.एस.बी.) के प्रयोग को नजर अन्दाज करना।
- दलहनी फसल होने के कारण मटर से रासायनिक उर्वरकों का अनुचित व असंतुलित प्रयोग करना।
- खरपतवारों का अधिक प्रकोप होना।
- मटर की फसल में सबसे जटिल समस्या है कि उसमें एक साथ फूल व फल का न बनना। ऐसा जीवाणु व पौधों में कार्बोहाइडेट व नाइट्रोजन के लिए स्पर्धा होने के कारण होता है।
- खड़ी फसल में कीटों व बीमारियों का उचित समय पर नियन्त्रण न करना।

उन्नतशील प्रजातियां

मटर की कुछ नवीनतम व उन्नतशील प्रजातियों का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है :

बोनबिले :– यह देर से बोयी जाने वाली किस्म है। यह सब्जी मटर के लिए उगायी जाती है। इसकी फलियां बुवाई के 95–105 दिनों बाद तोड़ने योग्य हो जाती हैं। हरी फलियों की औसत पैदावार 130–140 क्विंटन/हेक्टेयर होती है। यह किस्म मध्यम ऊंचाई वाली है।

अर्किल :– यह एक अगेती किस्म है। इसकी हरी फलियां 60–70 दिनों बाद तोड़ने योग्य हो जाती हैं। इसके बीज सिकुड़े हुए होते हैं। हरी फलियों की औसत पैदावार 80–90 क्विंटल/हेक्टेयर होती है।

अर्ली दिसम्बर :– यह भी अगेती किस्म है, जो टाईप–19 व अर्ली बेजर किस्मों के संकरण से तैयार की गयी है। बुवाई के 60–70 दिनों के अन्दर हरी फलियां तोड़ने योग्य हो जाती हैं। फलियां गहरे हरे रंग की होती हैं। इसकी औसत उपज 90–100 क्विंटल/हेक्टेयर होती है।

जवाहर :– यह मध्यम समय में तैयार होने वाली सब्जी मटर के लिए प्रयोग की जाती है। हरी फलियां 65–75 दिनों में तोड़ने के लिए तैयार हो जाती हैं। इसकी औसत उपज 80–90 क्विंटल/हेक्टेयर है।

टाईप–19 :– यह किस्म मध्यम अवधि वाली लगभग 110–120 दिनों में पक जाती हैं। फलियां 75–80 दिनों में तोड़ने योग्य हो जाती हैं। बीज सिकुड़े हुए तथा हरे–सफेद रंग के होते हैं। इसकी हरी फलियों की औसत उपज 80–110 क्विंटल/हेक्टेयर है।

टाईप–163 :– यह किस्म उत्तर प्रदेश के लिए उपयुक्त है। यह दाने के लिए उगायी जाती है। पौधों का रंग हल्का सफेद तथा फूल भी सफेद रंग के होते हैं। बीज गोल, चिकने व बड़े आकार के होते हैं। इसकी औसत उपज 20–25 क्विंटल/हेक्टेयर है।

डी.डी.आर.–7 :– इस किस्म का विकास भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा किया गया। इसे वर्ष 1993 में उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों के लिए संस्तुत किया गया। इस प्रजाति की औसत उपज 22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है। यह सिंचित व बरानी दोनों क्षेत्रों के लिए उपयोगी है।

पूसा पन्ना (डी.डी.आर.–27) :– इस किस्म का विकास भी भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा किया गया। इसे वर्ष 2001 में उत्तर–पश्चिमी मैदानी क्षेत्रों के लिए संस्तुत किया गया है। इस किस्म की औसत उपज 17.7 क्विंटल/हेक्टेयर है। सिंचित व बरानी दोनों क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।

पूसा प्रभात (डी.डी.आर.–23) :– यह दाने के लिए उगायी जाने वाली प्रजाति है। इसे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित किया गया है। इस प्रजाति को वर्ष 2001 में उत्तर पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए संस्तुत किया गया है। पूसा प्रभात की औसत पैदावार 15.5 क्विंटल/हेक्टेयर है। यह सिंचित व बरानी दोनों क्षेत्रों के लिए उपयोगी है।

मटर के दानों का पोषण तत्वीय संघटन

घटक	पोषणमान प्रतिशत में
कार्बोहाइड्रेट	62.0
प्रोटीन	22.0
वसा	1.8
पानी	11.2
कैल्शियम	64.00
लोहा	4.86
राइबोफ्लेबिन	0.15
थाईमीन	0.72
नियासीन	2.40

पूसा मुक्ता (डी.डी.आर.–55) :– यह राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली के लिए उपयोगी है। इसे पूसा संस्थान, नई दिल्ली द्वारा वर्ष 2004 में विकसित किया गया है। यह बरानी व सिंचित दोनों क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। इस किस्म का पौधा बौना तथा जल्दी पकने वाला (108 दिन) होता है। एक फली में 5–6 दाने पाये जाते हैं। इसका दाना सफेद, गोल तथा आकर्षक होता है। यह किस्म पाउडरी मिल्डयू रोग के प्रति प्रतिरोधी है। इसके दाने की औसत उत्पादकता 25.0 क्विंटल/हेक्टेयर है।

नरेन्द्र सब्जी मटर–11 :– इस किस्म को नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, फैजाबाद द्वारा विकसित किया गया है। यह किस्म हरी फलियों के लिए उपयुक्त है। इस प्रजाति की फलियां 140 दिन में तोड़ने योग्य हो जाती है। यह उत्तर–पूर्वी मैदानी क्षेत्रों के लिए उपयोगी है।

बी.एल. मटर–10 :– इस किस्म का विकास विवेकानन्द पर्वतीय कृषि अनुसंधानशाला, अल्मोड़ा द्वारा किया गया है। यह किस्म सब्जी मटर हेतु उगायी जाती है। इस प्रजाति की हरी फलियां 120 से 125 दिन में तैयार हो जाती हैं। यह उत्तर पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयोगी सिद्ध हुई है।

आजाद मटर–1 :– यह किस्म चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा विकसित की गयी है। यह एक मध्यम अवधि 80–100 दिन में तैयार होने वाली सब्जी मटर है।

इसके अलावा वी.एल. अगेती मटर–7, पन्त उपहार, वी.एल. मटर–9, जवाहर मटर–9, पन्त मटर–2 व आजाद मटर–3 उन्नतशील किस्में हैं।

जलवायु

मटर शुष्क व ठण्डी जलवायु में अच्छी तरह पनपती है। प्रारम्भिक अवस्था में मटर काफी ठंड सहन कर लेती है। मटर के अंकुरण के लिए 20^0–22^0 सें. तापमान उपयुक्त रहता है। वानस्पतिक बढ़वार के लिए 15^0–18^0 सें. तथा फसल पकने के समय 18^0–30^0 सें. तापक्रम उपयुक्त होता है। मटर की फसल पाले से अत्यधिक प्रभावित होती है। फलियां बनने के समय अधिक आर्द्रता के कारण कीटों और बीमारियों का प्रकोप बढ़ने की सम्भावना रहती है।

मृदा का चुनाव

मटर की सफलतापूर्वक खेती के लिए दोमट व बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। परन्तु सिंचाई की सुविधा उपलब्ध होने पर मटर की खेती सभी प्रकार की कृषि योग्य मृदाओं में की जा सकती है। मटर के अच्छे उत्पादन के लिए मृदा का पी.एच. 6.5 से 7.0 के मध्य होना चाहिए। मृदा में जल–निकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिए।

खेत की तैयारी

बुवाई से पूर्व डिस्क हैरो की मदद से 2–3 गहरी जुताई करनी चाहिए। इसके बाद कल्टीवेटर की सहायता से मिट्टी को पूर्णतया भुरभुरी कर लेना चाहिए। प्रत्येक जुताई के समय पाटा अवश्य लगायें ताकि बुवाई के समय पर्याप्त नमी बनी रहे। इससे बीजों का अंकुरण शीघ्र व समान रूप से होता है।

फसल चक्र व सहफसली खेती

सामान्यतः मटर की फसल खरीफ की फसलों जैसे धान, ज्वार, बाजरा व मक्का की कटाई के बाद ली जाती है। शरदकालीन गन्ना व सरसों की दो कतारों के मध्य में मटर की दो लाइनें लगायी जा सकती हैं।

बुवाई का समय

मटर की बुवाई हेतु अक्टूबर का दूसरा पखवाड़ा उपयुक्त समय है। जबकि उत्तर भारत में सब्जी मटर हेतु बुवाई का उपयुक्त समय नवम्बर का पहला पखवाड़ा है। सब्जी मटर से अधिक कमाई के लिए इसकी बुवाई 15 सितम्बर से 30 सितम्बर तक भी की जा सकती है। सितम्बर में बोयी गयी फसल से दिसम्बर तक हरी फलियां बाजार में आ जाती हैं। यदि सब्जी मटर की खेती बीज उत्पादन हेतु करनी है तो बुवाई का सही समय 20 अक्टूबर से 15 नवम्बर के मध्य है। उत्तर–भारत के पहाड़ी क्षेत्रों में मटर की बुवाई का उचित समय अक्टूबर का अन्तिम सप्ताह है। इसके पश्चात बुवाई करने पर पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बीज एवं बीजोपचार

मुख्य फसल की बुवाई हेतु 80–90 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। जबकि सितम्बर माह में बोई जाने वाली सब्जी मटर हेतु 100–120 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिए। हमेशा प्रमाणित एवं उपचारित बीज का ही प्रयोग करना चाहिए।

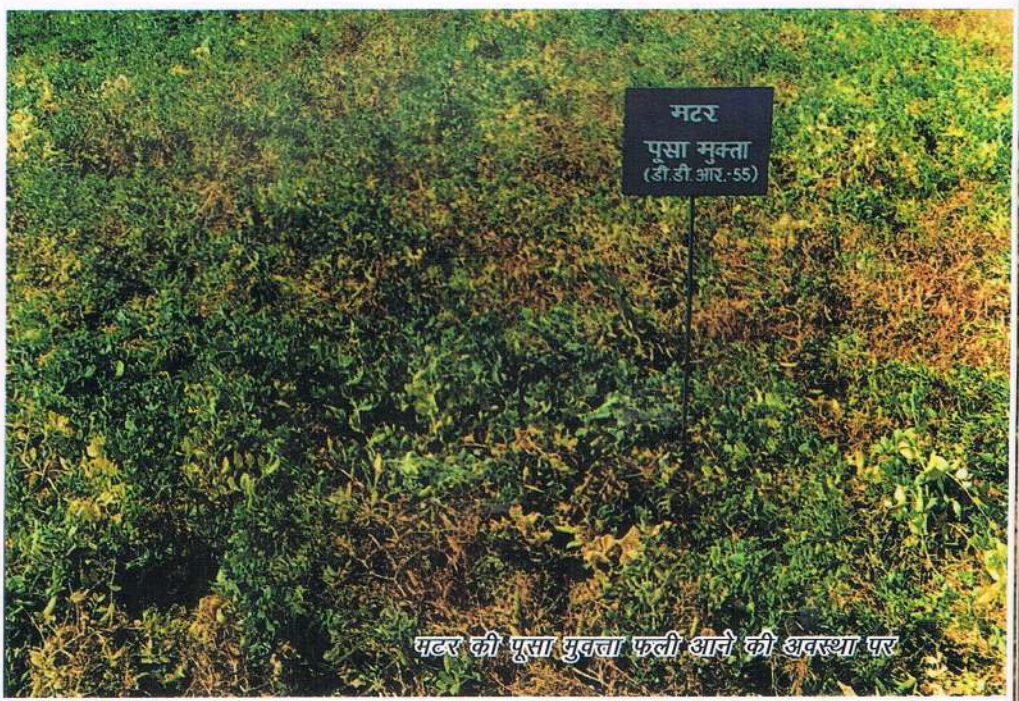

मटर की पूसा मुक्ता फली आने की अवस्था पर

मटर की फसल को भूमि व बीज जनित बीमारियों से बचाव हेतु बीज को फफूंदीनाशक रसायन जैसे केप्टान या थीरम के 0.25 प्रतिशत की दर से उपचारित करना चाहिए। इसके बाद बीजों को राइजोबियम कल्चर से उपचारित करना चाहिए। जिससे फसल द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन स्थिरीकरण प्रक्रिया सुचारू रूप से चलती रहे। बीज उपचार बुवाई के 10–12 घंटे पहले कर लेना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई हेतु राइजोबियम जीवाणु के दो पैकेट पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त कम लागत में अधिक पैदावार प्राप्त करने के लिए बीजों को फास्फेट सोलूबिलाइजिंग बैक्टिरियां (पी.एस.बी.) से भी उपचारित करना चाहिए। इससे मृदा में अउपलब्ध फास्फोरस की उपलब्धता बढ़ाने में मदद मिलती है।

बुवाई की विधि

बुवाई सदैव पंक्तियों में करनी चाहिए। मटर की भरपूर उपज हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 5 से.मी. रखनी चाहिए। अगेती बोई गयी सब्जी मटर की किस्मों में पौधों का आकार छोटा होने के कारण पंक्ति से पंक्ति की दूरी 20 से.मी. रखनी चाहिए। बीज को 5 से 6 से. मी. की गहराई पर बोना चाहिए। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। पर्याप्त नमी के अभाव में बीजों का अंकुरण ठीक तरह से नहीं हो पाता हैं

खाद एवं उर्वरक प्रबन्धन

मटर की अच्छी फसल लेने हेतु 10–12 टन गोबर या कम्पोस्ट खाद को खेत तैयार करने से पहले खेत में बिखरेकर कल्टीवेटर की सहायता से जुताई करके मृदा में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। वैसे खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के आधार पर करना चाहिए। मटर की फसल से अधिकतम पैदावार हेतु 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस और 40 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर देना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा, फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा बुवाई के समय डाल देनी चाहिए। शेष बची नाइट्रोजन की मात्रा को खड़ी फसल में फूल आने के समय समान रूप से छिटक देना चाहिए। इस समय नाइट्रोजन का प्रयोग लाभदायक रहता है। क्योंकि इससे जड़ों में गांठों का आकार बड़ा व उनकी संख्या बढ़ाने में मदद मिलती है। इसके अलावा खड़ी फसल में फूल आने की अवस्था पर नाइट्रोजन का पर्णीय छिड़काव भी किया जा सकता है। यूरिया के पर्णीय छिड़काव से लगभग सभी फूल एक साथ आ जाते हैं तथा फसल पकने में 8–10 दिनों की बचत होती हैं। मटर में फूल आने की अवस्था पर यूरिया का छिड़काव करने से फलियों की पैदावार पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। साथ ही फलियां तुड़ाई की संख्या घट जाती है। जिससे फलियां तुड़ाई में अनावश्यक खर्च भी बच जाता हैं। खेत भी अगली फसल के लिए समय पर तैयार हो जाता है।

सिंचाई प्रबन्धन

सामान्यतः मटर की फसल को दी सिंचाईयां पर्याप्त होती है। पहली सिंचाई फूल बनने के समय तथा दूसरी सिंचाई फलियों में दाना बनने के समय करनी चाहिए। फूल बनने के समय सिंचाई करने से फलियों में दानों की संख्या तथा फलियों के आकार पर लाभदायक प्रभाव पड़ता है। मटर के लिए हल्की सिंचाई की आवश्यकता होती है। खेत में अनावश्यक पानी का रुकना पौधों की वृद्धि व विकास के लिए हानिकारक होता है, साथ ही पानी के भराव से पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः जलनिकास का उचित प्रबन्ध होना चाहिए। जिससे जड़ों के आसपास वायु का संचरण आसानी से हो सके। ताकि पौधे वायुमंडलीय नाइट्रोजन का सुचारू रूप से स्थिरीकरण कर सकें।

खरपतवार नियन्त्रण

मटर की अधिक उपज लेने हेतु खरपतवार नियन्त्रण अति आवश्यक है। बुवाई के 30–45 दिनों का समय खरपतवार–फसल स्पर्धा का क्रान्तिक काल माना जाता है। अतः बुवाई के 30–35 दिनों बाद निराई–गुड़ाई करने से पौधों की बढ़वार अच्छी होती है। इससे भूमि में वायु का संचार भी अच्छा होता है। यदि किसी कारण से निराई–गुड़ाई सम्भव न हो तो खरपतवार नियन्त्रण हेतु बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व पेन्डीमिथेलीन (30 ई.सी.) 1.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व को प्रति हेक्टेयर की दर से 700–800 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा फ्लूक्लोरेलिन (बांसालिन) नामक खरपतवारनाशी की 1 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर मात्रा को खेत की तैयारी के समय मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए।

कीट नियन्त्रण

मटर की फसल में लगने वाले कीटों को निम्न उपाय अपनाकर समाप्त किया जा सकता है।

तना छेदक :– मटर की अगेती बुवाई करने पर तना छेदक का अत्यधिक प्रकोप होता है। फसल बढ़वार की प्रारम्भिक अवस्था में ही इसकी मक्खियां पत्तियों पर अंडे देती हैं। इनके शिशु तने में सुरंग बनाकर अपना भोजन प्राप्त करते हैं। परिणामस्वरूप टहनी का अगला भाग मर जाता है। साथ ही पौधों की वृद्धि रुक जाती है। अन्ततः पौधा सूख जाता है। इसके नियन्त्रण हेतु फोरेट 10 प्रतिशत दानेदार दवा को (10 कि.ग्रा./हेक्टेयर) की दर से बुवाई के पहले मिट्टी में मिला देना चाहिए।

फली छेदक :– इस कीट का प्रकोप पछेती बोई गयी फसल पर अधिक होता है। इसकी सूड़ियां गहरे हरे रंग की होती हैं। यह सूड़ियां बाद में भूरे रंग की हो जाती हैं। यह फूल आने से लेकर कटाई तक फसल को हानि पहुंचाती हैं। इस कीट की सूड़ियां फली में छेद करके अन्दर ही अन्दर दाने खाने लगती हैं। फली छेदक कीट की रोकथाम हेतु फूल आने से पूर्व व फली बनने के बाद मैलाथियान (50 ई.सी.) का 2 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। सब्जी के लिए फलियों की तुड़ाई हमेशा छिड़काव के 10 दिन बाद करनी चाहिए।

पर्ण सुरंग कीट (लीफ माइनर) :– यह कीट मटर की पत्तियों को नुकसान पहुंचाता है। इस कीट का प्रकोप मुख्य रूप से दिसम्बर से मार्च तक अधिक रहता है। मटर के अलावा यह कीट सरसों, मसूर, मूली, आलू व गोभी वर्गीय फसलों को भी नुकसान पहुंचाता है। यह एक मक्खी है जो पत्तियों के ऊतकों में छिद्र बनाकर अपने अंडे देती है। प्यूपा भी ऊतकों के अन्दर बनता है। जो यही से वयस्क होकर बाहर निकलता है। इसकी रोकथाम हेतु संक्रमित पत्तियों को तोड़कर नष्ट कर दें। खड़ी फसल में प्रकोप दिखने पर फास्फेमिड़ान 0.05 प्रतिशत या क्विनलफास 0.1 प्रतिशत दवा का स्प्रे करना चाहिए। इसके अलावा 1 लीटर मेटासिस्टॉक्स 100 लीटर पानी में घोल बनाकर भी छिड़काव किया जा सकता है। कीट के प्रभावी नियन्त्रण हेतु उपयुक्त छिड़काव को दो–तीन बार 15 दिनों के अन्तराल पर करना चाहिए।

रोगों की रोकथाम

मटर की फसल में जिन प्रमुख रोगों का प्रकोप होता है, उनका संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है।

चूर्णिल आसिता रोग :– यह रोग एरीसाइफी पोलीगोनी नामक फफूंद द्वारा फैलता है। सामान्यतः इस रोग का प्रकोप मटर उगाने वाले सभी क्षेत्रों में पाया जाता है। देरी से बोयी गयी फसल पर इसका अधिक प्रकोप होता है। इस रोग के कारण सम्पूर्ण पौधे पर सफेद चूर्ण दिखने लगता है। इस रोग के प्रकोप से बचने के लिए रोग अवरोधी किस्मों की बुवाई करनी चाहिए। फसल की बुवाई समय पर करनी चाहिए। खेत में संक्रमित पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। इसके अतिरिक्त 3 कि.ग्रा. घुलनशील गंधक जैसे सल्फेक्स को 100 लीटर पानी में घोलकर खड़ी फसल में 15 दिन के अन्तराल पर दो बार छिड़काव करें।

बीज एवं जड़ विगलन :– यह रोग बीज या मृदा जनित फफूंद द्वारा फैलता है। इस रोग में बीज बुवाई के बाद अंकुरण से पूर्व ही सड़ जाते हैं या अंकुरण के तुरन्त बाद पौधे मर जाते हैं। अगेती बोयी गयी मटर में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। अधिक नमी व कम प्रकाश भी रोग को बढ़ावा देता है। इस रोग के कारण उपज में 40–50 प्रतिशत तक कमी आ जाती है। इसकी रोकथाम के लिए बुवाई से पूर्व बीजों को थायरम या बेविस्टन कवकनाशी की 2.5 ग्राम मात्रा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। आजकल पर्यावरण हितैषी जैव फफूंदीनाशक ट्राईगोडर्मा विरिडी के 4.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज उपचार भी लाभदायक पाया गया है। साथ ही जलनिकास का भी उचित प्रबन्ध करना चाहिए।

उकठा रोग :– यह रोग एक मृदा जनित फफूंद द्वारा होता है। यह रोग जड़ों से शुरू होकर तनों को संक्रमित कर देता है। जिसके कारण पूरा पौधा सूख जाता है। इससे बचाव हेतु उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। बीजों को बुवाई से पूर्व बेविस्टिन फफूंदीनाशक के 2.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से या ट्राइगोड्रमा विरिडी के 4.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित करना चाहिए।

गेरूई रोग (रस्ट) :– यह रोग यूरोमाइसीज फेबी नामक फंफूद के द्वारा होता है। उत्तर भारत में इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। संक्रमित पौधे का तना विक्रीत हो जाता है। अन्ततः पौधा मर जाता है। इसकी रोकथाम के लिए प्रभावित पौधों को उखाड़कर जला दें। इसके अलावा 2 कि.ग्रा. डाइथेन एम–45 का घोल 800–1000 लीटर पानी में बनाकर छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15 दिन के अन्तराल पर दो–तीन छिड़काव करें।

सूत्रकृमि की रोकथाम

सूत्रकृमि मटर की फसल में लगने वाले छिपे शत्रु हैं जो मिट्टी में रहते हैं। यह पौधों की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहते हैं। ये जड़ों को संक्रमित कर पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं। जिसके कारण पैदावार में भारी गिरावट आ जाती है। सूत्रकृमि पौधों की जड़ों से आहार ग्रहण करते हैं। सूत्रकृमि से प्रभावित पौधे पीले पड़ जाते हैं, पत्तियों का आकार छोटा तथा सिकुड़ी हुई, जड़े ढूठंदार, छोटी, मोटी व गांठदार हो जाती हैं। सामान्यतः खेत में रोगी पौधे समूह में बिखरे हुए टुकड़ों में दिखाई पडते हैं, जो सूत्रकृमि के असमान वितरण के कारण होता है। सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए उचित फसल चक्र अपनाएं। गर्मियों में गहरी जुताई करें, जिससे सूत्रकृमि के अंडे और डिंभक तेज धूप तथा निर्जलीकरण के कारण मर जायें। बुवाई के तीन सप्ताह पूर्व नीम, अरंडी, महुआ, करंज इत्यादि खलियों की 15–20 क्विंटल मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में बिखेरकर जुताई कर दें। सूत्रकृमि नियन्त्रण के लिए मटर की रोगरोधी किस्मों जैसे सी–50, ए–70 व बी–58 का प्रयोग भी लाभकारी, प्रभावशाली व उपयोगी पाया गया है।

कटाई व मड़ाई

दाने के लिए उगायी गयी मटर की फसल मार्च–अप्रैल में सूखने लगती है। देर से कटाई करने पर फलियां खेत में ही चटक जाती हैं। अतः फसल की कटाई चटकने से पहले ही कर लेनी चाहिए। कटाई के बाद फसल को खलियान में 6–7 दिनों तक अच्छी तरह सुखा लेना चाहिए। ऐसा करने से फलियों से दाने आसानी से अलग हो जाते हैं। सब्जी के लिए बोई गयी मटर की हरी फलियां बुवाई के 60 से 70 दिनों बाद तोड़ने के लिए तैयार हो जाती हैं। फलियां तैयार होने पर 10–12 दिन के अन्तर पर 3–4 बार में तोड़नी चाहिए। फलियों को तोड़ने से पूर्व देख लें कि वह पूर्ण रूप से भरी हुई है तथा फलियों के छिलके का रंग गहरा हरा हो गया है।

उपज

मटर की खेती में उन्नत व नवीनतम प्रजातियों का प्रयोग कर 100–125 कुन्तल हरी फलियां प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती हैं। सही समय पर तुड़ाई करके बाजार में अच्छी तरह ग्रेडिंग करके भेजने पर भरपूर कमाई की जा सकती है। इसके अतिरिक्त 25–30 कुन्तल प्रति हेक्टेयर तक सूखा भूसा भी प्राप्त हो जाता है।

(लेखक भूतपूर्व कृषि रक्षा अधिकारी हैं।)
ई–मेल : jpmalik@yahoo.co.in

स्फूर्तिदायक और रोग निवारक नींबू

साधना यादव

नींबू शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के साथ ही एंटी आक्सीडेंट का काम भी करता है और कोलेस्ट्रोल भी कम करता है। नींबू में मौजूद विटामिन सी और पोटेशियम घुलनशील होते हैं, जिसके कारण ज्यादा मात्रा में इसका सेवन भी नुकसानदायक नहीं होता। रक्ताल्पता से पीड़ित मरीजों को भी नींबू के रस के सेवन से फायदा होता है। यही नहीं, नींबू का सेवन करने वाले लोग जुकाम से भी दूर रहते हैं। एक नींबू दिन भर की विटामिन सी की जरूरत पूरी कर देता है। नींबू के कुछ घरेलू प्रयोगों पर लगभग हर भारतीय का विश्वास है।

नींबू की औद्योगिक रूप से खेती कर किसान कम लागत और कम मेहनत में अधिक मुनाफा कमा सकते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् की ओर से विभिन्न देशभर में खुले कृषि विज्ञान केंद्रों एवं रीमेन्डेटेड क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्रों के जरिए किसानों को नींबू की खेती करने के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। कृषि विभाग भी अपने स्तर पर किसानों को नींबू खेती के फायदे बता रहा है। उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर, जौनपुर सहित विभिन्न स्थानों पर किसान विज्ञान केंद्रों की ओर से मिले प्रोत्साहन के बाद व्यापक स्तर पर किसान इस खेती में जुट गए हैं और भरपूर मुनाफा कमा रहे हैं।

विटामिन सी से भरपूर नींबू स्फूर्तिदायक और रोग निवारक फल है। इसके रस में साइट्रिक अज़्ल होता है। किण्वन पद्धति के विकास के पहले नींबू ही साइट्रिक अज़्ल का सर्वप्रमुख स्रोत था। इसके स्वास्थ्यरक्षक गुणों के चलते ही पश्चिमी देशों में

इसके सेवन को बढ़ावा देने के लिए 29 अगस्त को लेमन जूस डे मनाया जाता है। साधारणतः नींबू के पौधे आकार में छोटे ही होते हैं पर कुछ प्रजातियां छह मीटर तक लम्बी उग सकती हैं। नींबू की उत्पत्ति के बारे में कृषि वैज्ञानिकों की अलग–अलग राय है। अभी तक इसकी उत्पत्ति को लेकर ठोस प्रमाण नहीं मिल पाया है। फिर भी माना जाता है कि यह पौधा मूल रूप से भारत, उत्तरी म्यांमार एवं चीन का निवासी है। इसे खाने में प्रयोग करने को लेकर भी अलग–अलग राय है। लेकिन यूरोप और अरब देशों में लिखे गए दसवीं सदी के साहित्य में इसका उल्लेख मिलता है। भारतीय साहित्य में मुगलकाल के दौरान नींबू को शाही फल के रूप में स्वीकारोक्ति के प्रमाण मिलते हैं। भारत में पहली बार असम में नींबू की पैदावार हुई।

इसके गुणों को देखते हुए मांग बढ़ी और अब इसकी व्यावसायिक खेती शुरू हो गई है। विश्व में सबसे अधिक नींबू का उत्पादन भारत में होता है। यह विश्व के कुल नींबू उत्पादन का 16 प्रतिशत भाग उत्पन्न करने लगा है। इसके अलावा मैक्सिको, अर्जेन्टीना, ब्राजील एवं स्पेन अन्य नींबू उत्पादक देश हैं।

नींबू में पाए जाने वाले प्रमुख तत्व : प्रत्येक बिना छिले हुए मध्यम आकार के नींबू में .64 ग्राम प्रोटीन और 1.6 ग्राम डाइटरी फाइबर होता है इसमें भरपूर मात्रा में विटामिन ए, विटामिन बी, क्लोरीन, प्रोटीन, वसा एवं कार्बोज भी पाया जाता है। इसके अलावा पोटेशियम–80 मिग्रा., कैल्शियम–15 मिग्रा., फॉस्फोरस–9.2 मिग्रा., मैग्नीशियम–4.6 मिग्रा., आयरन–35 मिग्रा., विटामिन सी–4 मिग्रा. पाया जाता है।

ऐसा माना जाता है कि दिन भर तरोताजा रहने और स्फूर्ति बनाए रखने के लिए एक गिलास गुनगुने पानी में एक नींबू का रस व एक चम्मच शहद मिलाकर पीना चाहिए। एक बाल्टी पानी में एक नींबू के रस को मिलाकर गर्मियों में नहाने से दिनभर ताजगी बनी रहती है। गर्मी के मौसम में हैजे से बचने के लिए नींबू को प्याज व पुदीने के साथ मिलाकर सेवन करना चाहिए।

लू से बचाव के लिए नींबू को काले नमक वाले पानी में मिलाकर पीने से दोपहर में बाहर रहने पर भी लू नहीं लगती। गले में मछली का कांटा फंस जाए तो नींबू के रस को पीने से निकल जाता है। आयुर्वेदाचार्य डॉ. शंभूनाथ यादव की मानें तो किसी भी अन्य फल के मुकाबले नींबू में विटामिन सी की मात्रा सबसे ज्यादा होती है। यह एंटी आक्सीडेंट की तरह काम करता है और कोलेस्ट्राल भी कम करता है। रक्ताल्पता से पीड़ित मरीजों को भी नींबू के रस के सेवन से फायदा होता है।

नींबू भूख बढ़ाता है : हमारे शरीर में बल और स्फूर्ति के स्रोत हैं कार्बोज। जीने योग्य गर्मी बनाए रखने के लिए हमें कार्बोज की हमेशा जरूरत होती है। नींबू में कार्बोज भी भरपूर हैं। इसके नियमित सेवन से कब्ज दूर हो जाती है और भूख लगती है।

पेट के रोगों में लाभकारी : अदरक के छोटे–छोटे टुकड़े काटकर उन पर नींबू निचोड़िए। ऊपर से सेंधा नमक छिड़क कर खाने से हाजमा सही हो जाता है और खुलकर डकार आती है। पेट दर्द होने पर एक चौथाई 'नींबू–रस निकालें, एक तोला काला नमक, और तीन माशा हींग भी लें। किसी साफ शीशी में, निचुड़े

हुए नींबुओं का गूदा डाल दें, उसमें बीज नहीं होना चाहिए। गूदे के ऊपर काला नमक डालकर शीशी को हिलाए और धूप में डाल दें। गूदा गल जाने पर नींबू का रस और हींग भी डाल दें। शीशी को ढक्कन लगाकर तीन सप्ताह चाहे धूप में रखें, चाहे धरती में गाड़ दें। दवा तैयार। उदर–शूल में विशेष हितकारी है।

खूनी बवासीर में लाभकारी : आयुर्वेदाचार्य के मुताबिक दूध के साथ नींबू रस लेने से खूनी बवासीर से राहत मिलती है। अगर मचली आने लगे या कै (वमन) हो रही हो तो ताजे ठंडे जल में शक्कर घोले और उसमें नींबू का रस मिलाकर पीने से राहत मिलती है। खुजली होने पर नारियल के तेल में नींबू का रस मिलाकर लगाने से राहत मिलती है।

नींबू की प्रमुख प्रजातियां

कागजी नींबू : यह प्रजाति सबसे फायदेमंद मानी गई है। इसकी व्यापक लोकप्रियता के कारण इसे खट्टा नींबू का पर्याय माना जाता है। यह किस्म ट्रिस्टेजा विषाणु तथा जीवाण्विक केंकर रोग के प्रति अधिक सुग्राह्य है।

प्रमालिनी : यह किस्म गुच्छाकार में फल देती है। एक गुच्छे में कम से कम पांच से सात फल होते हैं। कागजी नींबू की अपेक्षा

इसकी पैदावार भी अधिक है। लेकिन इसमें लेमन बटरफ़्लाई कीट का खतरा अधिक रहता है।

सीडलेस नींबू : यह एक नया चयन है, जो अन्य किस्मों से दुगुना उत्पादन देता है। यह पिछैती किस्म है। इसके फल हल्के गुलाबी रंग वाले और पतले छिलके वाले होते हैं।

विक्रम : यह किस्म भी गुच्छों में फलन करती है। एक गुच्छे में 5–10 तक फल आते हैं। कभी–कभी मई–जून तथा दिसम्बर में मौसमी फल भी आते हैं। कागजी नींबू की अपेक्षा 30–32 प्रतिशत अधिक उत्पादन देती है।

चक्रधर : यह खट्टा नींबू की बीजरहित किस्म है, जो रोपण के चौथे वर्ष से फल देना प्रारम्भ कर देती है। इसमें 60–66 प्रतिशत रस पाया जाता है। इसके फल अक्सर जनवरी–फरवरी, जून–जुलाई तथा सितम्बर –अक्टूबर में मिलते हैं।

साई शरबती : यह उच्च उत्पादन क्षमता वाला चयन है। इसमें ग्रीष्म फलन की प्रवृत्ति पाई जाती है। यह केंकर एवं ट्रिस्टेजा तथा पर्ण–सुरंगककीट के प्रति सहिष्णुता प्रदर्शित करता है। इसके अलावा पर्सियन वर्ग के नींबू गुणसूत्र त्रिगुणित होते हैं। फल आकार में बड़े व बीजरहित होते हैं। असम के कुछ क्षेत्रों में अभयपुरी लाइम तथा करीमगंज लाइम उगाए जाते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में कागजी के अलावा पतलेमन, यूरेका एवं मीठा नींबू की खेती होती है।

नींबू के संबंध में विशेष बातें

विदेशों में चल रहा है प्रयोग

जीन थिरैपी वाशिंगटन की ओर से नींबू की सहायता से सुनने की समस्या (बहरापन) से ग्रस्त लोगों का इलाज किया जा रहा है। नेचर मैगजीन में प्रकाशित हालिया अध्ययन में कहा गया है कि कान के अंदर की कोशिकाओं को फिर विकसित कर बहरेपन की समस्या से मुक्ति दिलाई जा सकती है। डा. जान ब्रिगांदे के नेतृत्व में अमेरिकी शोधकर्ताओं के एक दल ने इसके लिए चूहे पर प्रयोग किए। इसके तहत बालों की वृद्धि को नियंत्रित करने वाली कोशिका के जीन को गर्भ में पल रहे एक चूहे के कान के अंदरूनी हिस्से में प्रत्यारोपित कर दिया गया। शोधकर्ताओं ने पाया कि उसके कान में नई कोशिकाएं विकसित होने लगीं। यह उन लोगों के लिए उत्साहवर्द्धक खबर है जिनकी सुनने की क्षमता कम हो गई है और कानों में झनझनाहट होती रहती है। रिपोर्ट में कहा गया है कि शोधकर्ताओं को अपने प्रयोग में कान के अंदरूनी हिस्से में बालों की वृद्धि नियंत्रित करने वाली नई कोशिकाएं विकसित करने में मदद मिली।

डाक्टरों के बीच छिड़ी बहस

आस्ट्रेलियाई डॉक्टर रोजर शॉर्ट की मानें तो प्रयोगशालाओं के परीक्षणों से पता चला है कि नींबू का रस आदमी के शुक्राणु और एचआईवी वायरस को मार देता है। डॉक्टर शॉर्ट के अनुसार प्रयोगों में पाया गया कि नींबू के रस से भीगी रुई को महिलाएं यदि सेक्स से पहले इस्तेमाल करें तो यह गर्भनिरोधक का काम करता है। वे कहते है कि अफ्रीकी महिलाएं नींबू को गर्भनिरोधक के रूप में इस्तेमाल किया करती थी। वहीं ऑस्ट्रेलियाई सोसाइटी फॉर एचआईवी के वैज्ञानिक एंड्यू रुलिक का कहना है, यह हो सकता है कि नया शोध सही हो लेकिन प्रयोग मानव पर होने आवश्यक है। रुलिक का कहना है, नींबू में जो एसिड है वह निश्चित रूप से एचआईवी वायरस को नष्ट करेगा लेकिन उसकी अम्लता शरीर के अंदरूनी हिस्सों को नुकसान पहुंचा सकती है। इसलिए इस पर विस्तृत शोध की जरूरत है। वहीं डॉक्टर शॉर्ट यह भी कहते हैं कि नींबू के प्रयोग से होने वाले नुकसान के बारे में वह थाइलैंड में प्रयोग करने जा रहे हैं। वहीं की एड्स कंट्रोल सोसायटी ने उन्हें निमंत्रण दिया है।

(लेखिका वनस्पति विज्ञान की छात्रा हैं।)
ई–मेल : Sadhana.yadav09@gmail.com

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता
विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड–4, तल–7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

कपास की खेती में इतिहास रचता एक प्रगतिशील किसान

वीरेन्द्र परिहार

कपास की खेती में अधिक पानी की खपत होती है। पानी के इस महत्व को बलविन्दर सिंह ने बखूबी समझा और पानी की सप्लाई पूरे कपास के खेत में करने के लिए सोच डाली एक प्रणाली। इस प्रकार वैज्ञानिक तरीके से सिंचाई करते हुए इस किसान ने पूरे खेत में न केवल करीब 70 प्रतिशत पानी की बचत की बल्कि मात्र एक हेक्टेयर में अस्सी क्विंटल यानी औसत पैदावार से भी पन्द्रह गुना अधिक पैदावार प्राप्त करके एक इतिहास रच दिया। बलविन्दर के इस अनूठे कीर्तिमान से कृषि विशेषज्ञ भी हैरान और हतप्रभ हैं।

वैदिक कहावत है– वीरभोग्या वसुन्धरा अर्थात् वीर ही धरती को भोगते हैं। सरदार बलविन्दर सिंह भी ऐसे ही वीर हैं। बीटी कपास की खेती करने वाले किसानों के लिए राजस्थान के पाली जिले के प्रगतिशील किसान सरदार बलविन्दर सिंह किसी आदर्श से कम नहीं है। कम पानी में अच्छी खेती कर बम्पर पैदावार प्राप्त करना कोई इनसे सीखे।

मूलतः पंजाब के अमृतसर से सम्बन्ध रखने वाले सरदार बलविन्दर सिंह का जीवन भी उतार–चढ़ाव का साक्षी रहा। जीवन में कुछ खास करने की ललक इनके मन में बचपन से ही थी। परन्तु इन्तजार था तो बस केवल एक मौका पाकर सही क्षेत्र चुनने का। और वो क्षेत्र चुना इन्होंने खेतीबाड़ी का। शुरू–शुरू में खेतीबाड़ी में सरदार ने परम्परागत स्वरूप को ही अपनाया।

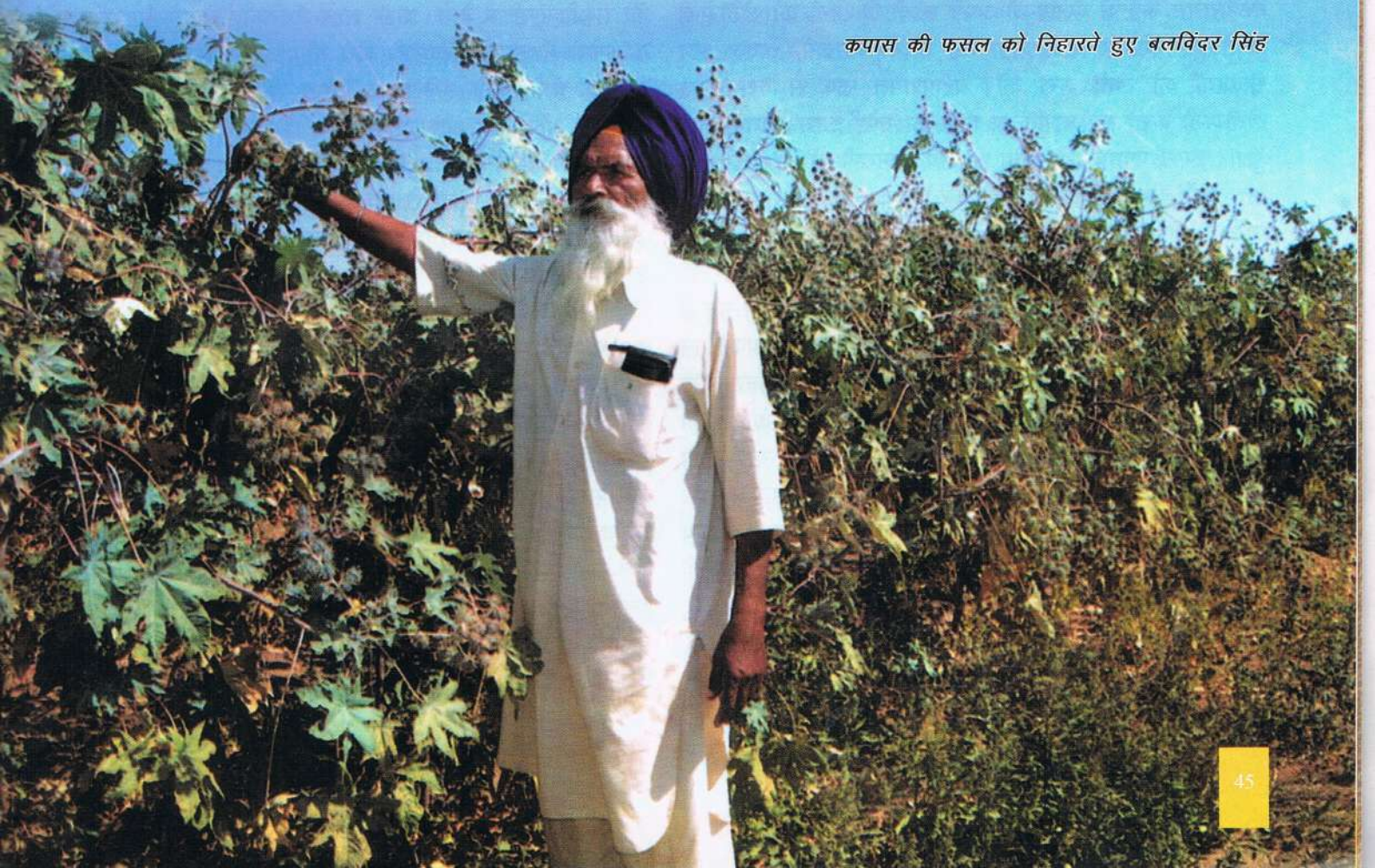

कपास की फसल को निहारते हुए बलविंदर सिंह

परम्परागत रूप से पंजाब के अपने साथी किसानों को खेतीबाड़ी करते हुए देखकर बलविन्दर सिंह ने गेहूं, सरसों, चावल और सब्जियों की खेती शुरू की। परम्परागत रूप से परम्परागत खेतीबाड़ी करते हुए बलविन्दर सिंह को कोई खास फायदा नहीं हुआ। खास फायदा से सीधा मतलब आमदनी से था। लगातार पांच वर्षों तक परम्परागत खेती करते हुए इनका मोह इस खेती से धीरे–धीरे भंग हो गया।

चूंकि सरदार बलविन्दर सिंह महत्वाकांक्षी स्वभाव के हैं, इसलिए इन्होंने खेतीबाड़ी में कुछ विशेष हटकर करने की मन में सोच डाली। खेती बाड़ी में कुछ विशेष करने की चाहत अपने मन में संजोकर इन्होंने पंजाब से राजस्थान की ओर मुख कर दिया और अपनी कर्मस्थली बनाया राजस्थान के पाली जिले को। पाली जिले मे वर्षा का वार्षिक औसत कम ही रहता है और यह जिला सूखे के रूप में पहचाना जाता है। करीब बीस वर्ष पहले सरदार बलविन्दर सिंह ने पाली की धरती पर कदम रखा। बीस वर्ष पूर्व किसी ने भी यह नहीं सोचा होगा कि ये सरदार लाभ की खेती करके एक सबसे सफल किसान बन जाएगा।

बलविन्दर ने पाली में अपने शुरूआती दिनों में ककड़ी, खरबूजा, तरबूज जैसी कद्दूवर्गीय पैदावार प्राप्त की और इन्हें शहर की सब्जी मण्डी में बेचा। पाली शहर में रिकार्ड बनाते हुए सरदार ने अपनी मेहनत से एक ही दिन में दस हजार रुपये तक की सब्जियां बेची। धीरे–धीरे इनका ध्यान बागवानी यानी फलदार पौधें की ओर गया और इन्होंने अपनी एक हेक्टेयर जमीन पर कपास की खेती कर डाली। कपास में अच्छी खेती के प्रति सरदार बलविन्दर पहले से ही आश्वस्त थे। दिन और रात एक करते हुए इन्होंने अपनी पूरी ताकत झोंक दी कपास की खेती में। कपास की अच्छी खेती करना इन्होंने अपना मुख्य लक्ष्य बना दिया और वाहे गुरु ने इनका भरपूर साथ दिया, इनको मंजिल तक पहुचाने में।

कपास की बुवाई करने के बाद बलविन्दर सिंह ने वैज्ञानिक तरीकों का सहारा लिया। वैज्ञानिक तरीकों से उर्वरकों और रासायनिक खाद का प्रयोग किया। कपास की खेती में अब सबसे बड़ी समस्या सरदार के सामने थी पानी की। कपास की खेती में अधिक पानी की खपत होती है। सब माया पानी की है और पानी बिन सब सून। पानी के इस महत्व को इन्होंने बखूबी समझा और इन्होंने पानी की सप्लाई पूरे कपास के खेत में करने के लिए सोच डाली एक प्रणाली। खेत में ही ट्यूबवैल खुदवाकर इन्होंने एक टैंक बनवा दिया। टैंक में पानी को स्टोर किया गया। टैंक से पूरे

खेत में यानी कपास की क्यारी–क्यारी तक पानी पहुंचाने के लिए ड्रिप का सहारा लिया गया। कम पानी की सप्लाई एक नए तरीके से की। कपास के खेत में इन्होंने तीन–तीन फीट चौड़ी नालियां बनाई और इनके दोनों किनारों पर कपास की फसल बोई। प्रत्येक नाली के दोनों ओर आठ फीट की जगह छोड़ी, जिससे फायदा यह हुआ कि सिर्फ तीन फीट की नाली में ही पानी देना पड़ा।

इसके बाद समस्या आती है समय और श्रम के प्रबन्धन की। इस बात को बखूबी समझा बलविन्दर ने। कपास के खेत में तीन फीट गहरी नालियां बनाकर क्यारियों के बीच में आठ फीट जगह छोड़ दी क्यारियों के बीच में आठ फीट का स्थान छोड़ देने से एक तो फायदा यह हुआ कि कपास की फसल को पर्याप्त हवा मिल गई, जिससे फसल कभी भी मुरझाई नहीं। कपास की फसल के बीच में स्थान छोड़ देने से फसल के अन्दरूनी भाग तक पर्याप्त प्रकाश पहुंच गया। फसल के अन्दरूनी भाग तक प्रकाश पहुंच जाने से फसल की बढ़वार अच्छी हो गई। प्रकाश पूरी मात्रा मे फसल को मिल जाने से फसल को ऊंचाई पकड़ने में मदद मिल गई।

समय और श्रम की बचत करने के लिए बलविन्दर ने हर मुकाम पर ध्यान रखा। कपास की फसल का खाद बीज और उर्वरकों की सप्लाई करने के लिए इन्होंने एक चैनल सिस्टम बनाया और इसी के माध्यम से खाद बीज डाले। कपास की फसल के पूरी तरह पक जाने के बाद सबसे महत्वपूर्ण कार्य होता है कपास को तोड़ने का यानी पिकिंग का। कपास की क्यारियों के बीच जगह छोड़ देने का सबसे बड़ा फायदा यह हुआ कि कपास को तोड़ने (पिकिंग) में मदद मिल गई। कपास को तोड़ने के लिए खड़े रहने के लिए सुविधाजनक स्थान मिल गया। कपास की अच्छी फसल लेने में एक और महत्वपूर्ण कार्य होता है निराई गुडाई। नालियों के बीच आठ फीट की जगह छोड़ देने से बलविन्दर सिंह को खेत में निराई गुड़ाई अच्छी तरह करने में सुविधा मिल गई। जगह छोड़ देने से लाभ यह हुआ कि खेत पूरी तरह तैयार हो गया।

अपनी फसल को रोगों व कीटनाशकों से बचाने के लिए बलविन्दर सिंह ने समय–समय पर पाली के सहायक कृषि अधिकारी अशोक राजपुरोहित और सहायक निदेशक गोपाल लाल कुमावत का मार्गदर्शन प्राप्त किया। कीटनाशकों से फसल को बचाए रखने के लिए इन्होंने समय–समय पर पूरे खेत में स्प्रे किया। कपास की क्यारियों के बीच जगह छोड़ देने से स्प्रे करने में सुविधा मिल गई।

आमदनी बढ़ाना बलविन्दर सिंह का सपना था और इस सपने को पूरा करने के लिए इन्होंने एक और योजना बनाई। इस योजना के अन्तर्गत इन्होंने बीच में जगह छोड़े स्थान पर ककड़ी, टिंडसी और बैंगन की बुवाई कर दी। नतीजा यह रहा कि इससे बलविन्दर सिंह को भरपूर फसल प्राप्त हुई जिससे अतिरिक्त आमदनी का उनका सपना पूरा हो गया। कपास की फसल को तोड़कर सुरक्षित रखने के लिए ओर फसल को स्टोरेज करने के लिए बलविन्दर ने एक गोदाम बना रखा है जिसमें बेचने तक ले जाने से पहले सुरक्षित रखा जाता है।

सरदार बलविन्दर का शुरू से ही कृषि नवाचारों और कृषि अनुसंधानों में विश्वास रहा है। बलविन्दर सिंह समय–समय पर कृषि विभाग द्वारा आयोजित सेमीनारों, कृषक गोष्ठियों में भाग लेते है। दूरदर्शन और आकाशवाणी पर प्रसारित होने वाले कृषि कार्यक्रमों को देखना इनका आदर्श रहा है। कृषि कार्यक्रमों को देखकर कृषि नवाचारों को अपनाना इनका प्रारम्भ से ही लक्ष्य रहा है।

कृषि विभाग द्वारा जिला स्तरीय और राज्यस्तरीय कृषि गोष्ठयों में बलविन्दर ने जिला कृषक प्रतिनिधि के रूप में भी हिस्सा लिया है। बलविन्दर सिंह का मानना है कि खेतीबाड़ी में नित नए हो रहे अनुसंधानों को जानना जरूरी है, और ये आज की आवश्यकता भी है, और उन्हें अपनाने से ही आदर्श खेती का कीर्तिमान स्थापित किया जा सकता है। हमारे दूसरे किसान भाई भी यदि बलविन्दर सिंह के पदचिन्हों पर चलेंगे तो निश्चित ही कपास में आदर्श खेती के नए आयाम स्थापित किए जा सकेंगे।

इस प्रकार वैज्ञानिक तरीके से सिंचाई करते हुए सरदार ने पूरे खेत में करीब 70 प्रतिशत पानी की बचत कर दी। यह प्रणाली बलविन्दर सिंह ने स्वयं विकसित की इससे एक तो फायदा यह हुआ कि पानी की बचत हो गई और दूसरे कपास की क्यारी–क्यारी तक पानी पहुंच गया। समय–समय पर बलविन्दर सिंह कृषि विशेषज्ञों के सम्पर्क में रहें और उनकी सलाह प्राप्त करते रहे। नतीजा आज सबके सामने है। बलविन्दर सिंह ने इस कपास की फसल पर बुवाई से लेकर बिनाई तक मात्र तीस हजार रुपये खर्च किए। देखते ही देखते सरदार के खेत पर आश्चर्यचकित कर देने वाली कपास की फसल लहलहाने लगी। मात्र एक हेक्टेयर में अस्सी क्विंटल यानी औसत पैदावार से भी पन्द्रह गुणा अधिक पैदावार प्राप्त करके बलविन्दर सिंह ने इतिहास रच दिया। बलविन्दर के इस अनूठे कीर्तिमान से कृषि विशेषज्ञ भी हैरान और हतप्रभ हैं।

सरदार बलविन्दर सिंह के खेत की शानदार तरीके से

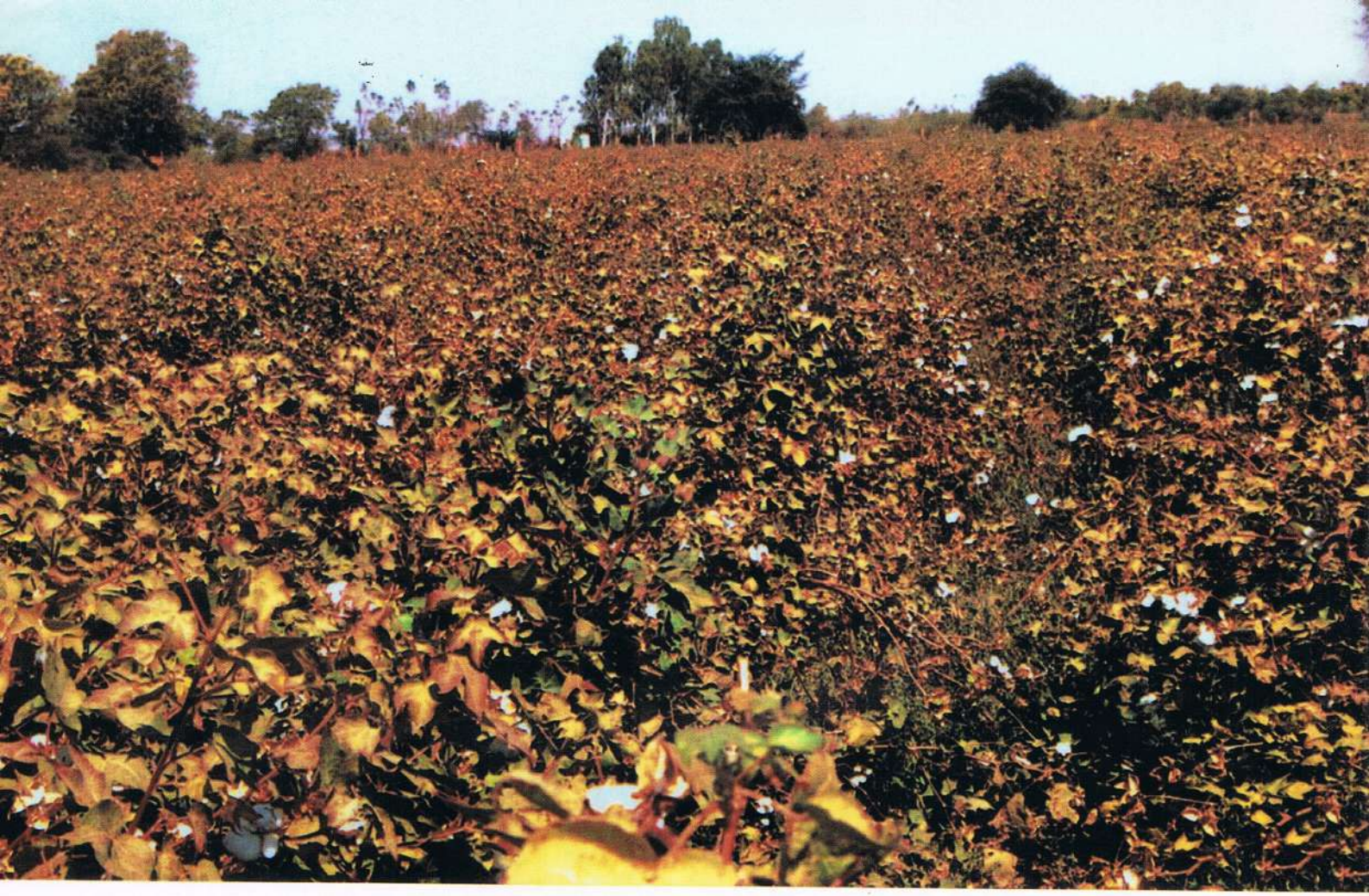

बलविंदर सिंह के खेत पर लहलहाती कपास की फसल

आसमान छू रही कपास की फसल से इनको तीन लाख रुपये की आमदनी प्राप्त हो चुकी है और अभी भी बलविन्दर इतने आश्वस्त है कि वो अभी तीस क्विंटल कपास और लेंगे। ये सब नतीजा है सरदार बलविन्दर की मेहनत का और सूझबूझ से की गई खेतीबाड़ी का। खुद बलविन्दर ने भी अपने चौसठ वर्षीय जीवन में इतनी अच्छी फसल नहीं देखी। सरदार जी आज कपास की खेती में एक सरताज किसान हो गए हैं।

सरदार जी के खेत पर लहलहा रही कपास की बम्पर फसल को देखकर आसपास के किसान हैरान और आश्चर्यचकित है। बलविन्दर सिंह के खेत की कपास सुमेरपुर, बिलाड़ा, ब्यावर और अजमेर मण्डियों में बिकने जाती है।

इस आसमानी सफलता को पाने वाले सफल किसान बलविन्दर सिंह का मानना है कि लाभ की खेती करनी है तो बागवानी के रास्ते ही चलना होगा। बलविन्दर सिंह से सीख लेकर हमारे किसान भाई खेती करेंगे तो लाभ की खेती कर पाएंगे। सही मायने में लाभ की खेती कम पानी में ही संभव है और कम पानी में बागवानी से ही खुशहाल भारत की तस्वीर देखी जा सकती है।

(लेखक दूरदर्शन कृषि कार्यक्रम में प्रोडक्शन सहायक हैं।)
ई–मेलः virandraparihardk@rediffmail

हमारे आगामी अंक

दिसंबर, 2009 – नरेगा : नए कदम
जनवरी, 2010 – बदलते गांव उभरता देश (गणतंत्र दिवस के 60 वर्ष पूरे होने के उपलक्ष्य में विशेषांक)
फरवरी, 2010 – ग्रामीण स्वास्थ्य
मार्च, 2010 – कृषि और जलवायु परिवर्तन
अप्रैल, 2010 – बजट 2010–11

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि, रोजगार व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे। उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं। पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए ।

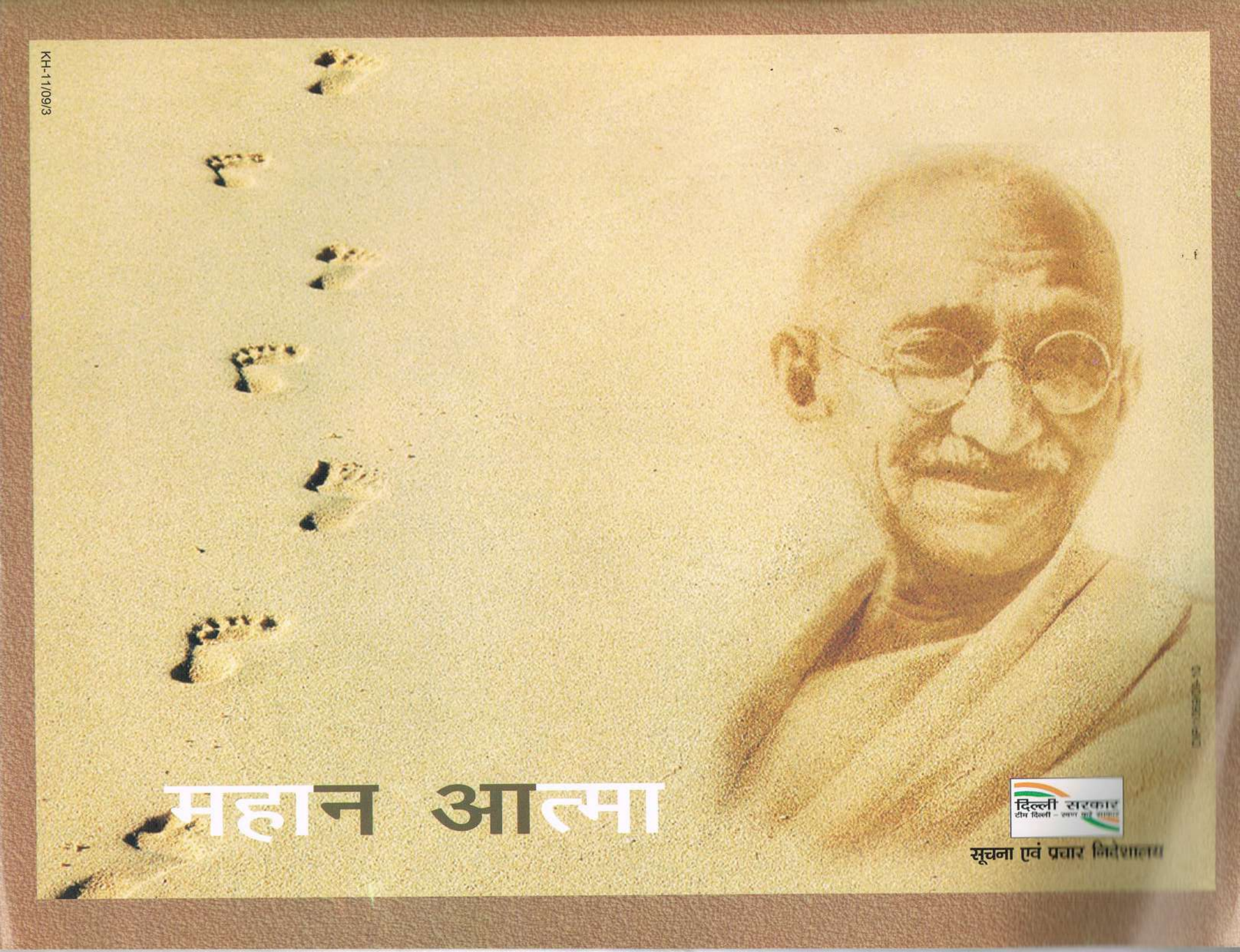

KH-11/09/3
महान आत्मा
दिल्ली सरकार
सूचना एवं प्रचार निदेशालय

आर. एन./708/57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2009–11
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55/2006–08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2009-11
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना